दिसम्बर–२०१६ ◆ वर्ष ५ ◆ अंक ०७ ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक

दिसम्बर–२०१६

आओ करें राष्ट्र आराधन,
हो समूल नष्ट कालाधन।
मंसूबे हों नष्ट पाक के,
दृढ़ संकल्प करें हम सब जन।
ऋषि कहते हैं राष्ट्र प्रथम है,
वारी जायँ प्रजा के सब जन ॥

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर–313001 (राज.)

₹ १० ६०

हरदम
के व्यंजनों का आधार,
है, एम.डी.एच. मसालों से प्यार।
MDH
मसाले
असली मसाले
सच - सच
Sambhar masala
Garam masala
DEGGI MIRCH
Chunky Chat masala
Chana masala
Kitchen King
Pav Bhaji masala
Peacock Kasoori Methi
ESTD. 1919
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली – 110015 Website : www.mdhspices.com

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य (मो.9314535379)

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆ भारत	विदेश
संरक्षक - ११००० रु.	$ 1000
आजीवन - १००० रु.	$ 250
पंचवर्षीय - ४०० रु.	$ 100
वार्षिक - १०० रु.	$ 25
एक प्रति - १० रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट
श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें।
अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया
मेन ब्रांच टाऊन हॉल, उदयपुर
खाता संख्या : ३१०१०२०१००४१५१८
IFSC CODE- UBIN 0531014
MICR CODE- 313026001
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३११७
मार्गशीर्ष शुक्लअष्टमी
विक्रम संवत्
२०७३
दयानन्दाब्द
१९२

December - 2016

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर २ व ३ (भीतरी आवरण) रंगीन	३५०० रु.
अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	
पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	२००० रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	१००० रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	७५० रु.

०४ वेद सुधा
०५ एक तीर तीन शिकार
१२ आर्य परिवारों के विवाह सम्बन्ध
१४ ऋचाओं में निरूपित नैतिक कर्तव्य
१६ पुनर्जन्म से जीव की क्रमिक उन्नति
१९ Manusmriti
२१ स्वामी श्रद्धानन्द
२३ हौसलों की उड़ान
२७ स्वास्थ्य-सुर से सेहत
२८ सत्यार्थप्रकाश पहेली- १२/१६
२९ कथा सरित-परिश्रम का फल
३० सत्यार्थ पीयूष-राजा-प्रजा सम्बन्ध
समाचार २५
हलचल २६

स्वामी: श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - ५ अंक - ०७

मुद्रण: द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक
श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) ३१३००१
(०२९४) २४१७६९४, ०९३१४५३५३७९, ०९८२९०६३११०
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

उस पर श्रद्धा करो

यं स्मा पृच्छन्ति कुह सेति घोरमुतेमाहुर्नैषो अस्तीत्येनम्।
सो अर्यः पुष्टीर्विजइवा मिनाति श्रदस्मै धत्त स जनास इन्द्रः।। - ऋ. २/१२/५

ऋषिः - गृत्समदः।। देवता- इन्द्र।। छन्दः - त्रिष्टुप्।।

विनय- मनुष्य जब गम्भीरतापूर्वक उस परमेश्वर की सत्ता पर विचार करने लगते हैं तो उनमें से कोई पूछते हैं 'वह ईश्वर कहाँ है' जिसने इस बड़े भोगदायक संसार में दुःख, दर्द, मृत्यु आदि पैदा करके लोगों का रसभंग कर रखा है, जो बड़े-बड़े दुष्टों का दलन करनेवाला तथा अपने वज्र से पापों का संहार करने वाला कहा जाता है, उस घोर भयंकर ईश्वर के विषय में वे पूछते हैं कि 'वह कहाँ है?' 'हमें बताओ वह कहाँ है?' दूसरे कुछ भाई निश्चय ही कर लेते हैं कि 'ईश्वर-वीश्वर कोई नहीं है।' 'बीसवीं शताब्दी में ईश्वर तो अब मर गया है'- 'ईश्वर केवल अज्ञानियों के लिये है', परन्तु हे मनुष्यो! तनिक सावधानी से देखो! सत्य को खोजो और इसे धारण करो। देखो! वे पुरुष जो अपनी समझ में प्रकृतिमय ईश्वरविहीन संसार में रहते हैं, अतः जो इस जगत् में जिस किसी प्रकार सुखभोग करना ही अपना ध्येय समझते हैं और स्वभावतः विपरीतगामी होकर धर्म, दया आदि के सत्यमार्ग को तिरस्कृत कर निरन्तर अपनी पुष्टि की ही धुन में लगे रहते हैं, अर्थात् धनसंग्रह, स्त्री, पुत्र, प्रतिष्ठा, प्रभाव आदि से अपने को समृद्ध और पुष्ट करते जाते हैं, उन 'अरि' नामक स्वार्थी लोगों के सामने भी एक समय आता है जबकि उनका यह सांसारिक भोग का खड़ा किया हुआ सब महल एकदम न जाने कैसे गिर पड़ता है। उनके जीवन में एक भूकम्प-सा आता है, उन्हें एक प्रबल धक्का लगता है। उनकी वह सब भौतिक तुष्टि क्षण में मिट्टी हो जाती है, सब ठाठ गिर पड़ता है। उस समय बहुत बार उनका अभिमान नष्ट होता है और वे नम्र होते हैं। कल्याणकारी है वह धक्का, कल्याणकारी है उनका वह

सर्वनाश, यदि वह उन्हें नम्र बनाता है और धन्य हैं वे पुरुष जिन्हें यह कल्याणकारी धक्का लगता है, क्योंकि वहीं पर प्रभु के दर्शन हो जाया करते हैं। हे मनुष्यों! वह ईश्वर आँख से दीखने की वस्तु नहीं है, उसे तो श्रद्धा की आँख से देखो। जो मनुष्यों की बड़ी-बड़ी योजनाओं को पलक झपकने में बदल देता है, कुछ-का-कुछ कर देता है; जिसके आगे अल्पज्ञ मनुष्य का कुछ बस नहीं चलता, तनिक उसे देखो, नम्र होकर उसे देखो; वही परमेश्वर है।

शब्दार्थ- यम्=जिस, घोरम्=अद्भुत, भंयकर वस्तु के विषय में, पृच्छन्ति स्म=लोग प्रश्न किया करते हैं कि, कुहः सः इति= 'वह कहाँ है', उत ईं एनम्=और जिस इसके विषय में, आहुः=बहुत-से कहा करते हैं कि, न एषः अस्ति इति= 'वह है ही नहीं', सः=वही, अर्यः=अरि के, विपरीतगामी स्वार्थी पुरुष के, पुष्टीः=सांसारिक समृद्धि, पुष्टि को, विजः इव=भूकम्प की भाँति, आमिनाति=विनष्ट कर देता है। जनासः=हे मनुष्यों!, अस्मै श्रत् धत्त=इस परमेश्वर पर श्रद्धा करो, सः इन्द्रः=वही परमैश्वर्यवान् परमेश्वर है।

साभार- वैदिक विनय

एक तीर तीन शिकार

जालीनोट

आतंकवाद

No
to make
TERRORISTS
PAKISTAN

कालाधन

नशे का आयात

जिहादी आतंक

ईर्ष्या द्वेष का मकड़जाल

यदि ईर्ष्या-द्वेष को मनुष्य के भयंकरतम शत्रु की उपाधि दी जाय तो उचित ही होगा। ईर्ष्या-द्वेष ने समाज व राष्ट्र तक को बर्बाद कर दिया, इतिहास इस बात का गवाह है। स्मरण कीजिए महाभारत युद्ध का मूल कारण क्या था । आप एक नहीं अनेक कारण बता सकते हैं, और संभवतः आप गलत भी नहीं होंगे। परन्तु यदि हमें एक ही कारण बताना हो तो ईर्ष्या-द्वेष का स्थान शीर्ष पर होगा। बालपन से ही दुर्योधन व उसकी मित्र मंडली पाण्डव बालकों के पराक्रम से ईर्ष्या-द्वेष का भाव रखते थे यह नितांत स्पष्ट है। पराक्रम ही नहीं पाण्डवों के सद्गुणों से भी ईर्ष्या रखते थे। यही विषबेल धीरे-धीरे वृक्ष बन गयी और परिणामस्वरूप महाभारत का महाविनाशक युद्ध हुआ। एक समय ऐसा आ गया था कि इन्द्रप्रस्थ में पाण्डव तथा हस्तिनापुर में कौरव सहृदयता पूर्वक राज्य कर सकते थे पर तभी दुर्योधन के सर पर ईर्ष्या के भूत ने ऐसा डेरा जमाया कि उसका अंत १८ अक्षोहिणी सेना के साथ स्वयं के विनाश के साथ हुआ। हमारा संकेत युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ की ओर है।

युधिष्ठिर ने तो भाई को मान प्रदान करते हुए आगत नरेशों से भेंट स्वीकार करने का कार्य दुर्योधन को सौंपा परन्तु नरेशों द्वारा लायी गयी अकूत संपत्ति ने दुर्योधन के अन्दर द्वेषाग्नि को प्रज्ज्वलित कर दिया। पाण्डवों के ऐश्वर्य को देखकर दुर्योधन संताप से जलने लगा। उसने मामा शकुनि से कहा-

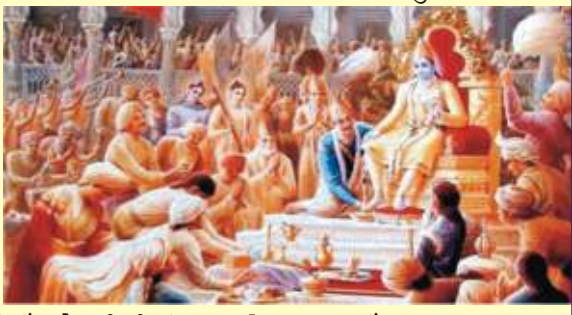

सोऽहं श्रियं च तां दृष्ट्वा सभां तां च तथाविधाम् ।
रक्षिभिश्चावहासं तं परितप्ये यथाग्निना ।।
स मामभ्यनुजानीहि मातुलाद्य सुदुःखितम् ।
अमर्षं च समाविष्टं धृतराष्ट्रे निवेदय ।। - महा. स.प. ४७/३६,४०

राजसूय यज्ञ से लौटते हुए दुर्योधन शकुनि को कहता है कि ' मैं उस राज्यलक्ष्मी को, उस दिव्य सभा को तथा रक्षकों द्वारा किये गए अपने उपहास को देखकर निरंतर संतप्त हो रहा हूँ, मानो आग में जलता होऊ। मामाजी अब मुझे (मरने के लिए) आज्ञा दीजिये, क्योंकि मैं बहुत दुखी हूँ और ईर्ष्या की आग में जल रहा हूँ। महाराज धृतराष्ट्र को मेरी यह अवस्था बता दीजियेगा।'

दुर्योधन की इसी मनः स्थिति के परिणामस्वरूप द्यूत की कपटपूर्ण योजना का निर्माण हुआ और महाभारत युद्ध की आधार शिला रखी गयी।

नीतिकारों ने मनुष्य से यह अपेक्षा की है कि वह समृद्ध व सुखी जनों को देख प्रसन्नता का अनुभव करे। ईर्ष्या इसके ठीक उलट है। इसमें दूसरे की समृद्धि को देख दुःख का अनुभव होता है। दूसरे को गुणसम्पन्न देख स्वयं पुरुषार्थ कर उन्नति को प्राप्त करने का प्रयास करना ईर्ष्या नहीं कहाती वरन् यह तो स्पर्धा है जो कल्याणकारी भी हो सकती है परन्तु ईर्ष्या में स्वयं प्राप्ति की अपेक्षा दूसरा समृद्धि वा गुण रहित हो यह अभिलाषा प्रबल होती है। यह केवल और केवल विनाशकारी होती है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल स्पर्धा तथा ईर्ष्या में अन्तर करते हुए लिखते हैं कि 'स्पर्धा में दुःख का विषय होता है कि 'मैंने उन्नति क्यों नहीं की' जबकि ईर्ष्या में दुःख का विषय होता है कि 'उसने उन्नति क्यों की'। स्पर्धा संसार में गुणी, प्रतिष्ठित और सुखी लोगों की संख्या में कुछ बढ़ती करना चाहती है और ईर्ष्या कम।' 'उसकी कमीज मेरी कमीज से ज्यादा सफेद क्यों है' यह बात हमें घुन के समान खाए जाती है। मेरे पास वह वस्तु हो न हो पर दूसरे के पास नहीं होनी चाहिए यह अभिलाषा ईर्ष्यालु के अन्दर प्रबल होती है। ईर्ष्या की चिंगारी तभी शांत होती है जब सामने वाले का नुक्सान हो जाय।

द्वेषाग्नि की प्रकृति को समझाने हेतु एक कथा सुनायी जाती है। शंख की कथा। एक साधू ने एक व्यक्ति पर प्रसन्न होकर ऐसा शंख दिया जिससे वह जो माँगे तुरन्त प्राप्त हो जाय। वह व्यक्ति स्वयं को संसार का सर्वाधिक भाग्यशाली व्यक्ति मानते हुए नाना प्रकार की वस्तुएँ यथा कार, कोठी, विविध व्यंजन आदि शंख से माँगने लगा और वे-वे वस्तुएँ उसे तुरन्त प्राप्त होने भी लगीं।

प्रसन्नता के अतिरेक में वह साधू की उस बात को भूल गया कि जो तुम इस शंख से माँगोगे, उतना तुम्हें अवश्य प्राप्त होगा परन्तु तुम्हारे पड़ोसी को उससे दुगुना। और ऐसा ही हुआ और होने लगा। उस व्यक्ति ने एक कार माँगी तो पड़ोसी को स्वतः दो कार मिल गयीं। जब सिलसिला चलने लगा तो इस व्यक्ति को झटका लगा। पड़ोसी की दुगुनी प्राप्ति उसे बेचैन करने लगी। वह स्वयं प्राप्ति के आनंद को भूल गया बस दिन-रात यही चिन्ता सताने लगी कि पड़ोसी किस प्रकार प्राप्ति से वंचित हो। पड़ोसी का अनायास सुख इसे इतना व्यथित कर गया कि इस भाव से कि पड़ोसी की दोनों आँख फूट जायँ वो पूरी तरह से लूला लंगड़ा हो जाय इसने स्वयं की एक आँख फूटने, एक पैर टूटने का वर शंख से माँग लिया। तो यह है ईर्ष्या की लाइलाज बीमारी। निम्न श्लोक में सही कहा है-

य ईर्षुः परवित्तेषु रूपे वीर्य कुलान्वये।
सुखसौभाग्यसत्कारे तस्य व्याधिनन्तकः।।

जो दूसरे के धन, सौंदर्य, शक्ति और प्रतिष्ठा से ईर्ष्या करता है उसकी व्याधि की कोई औषधि नहीं है।

ईर्ष्यालु दूसरे का अहित करने की अदम्य कामना के वशीभूत हो कहाँ तक जा सकता है उनमें से सहस्रों उदाहरणों में से 'प्रीति राठी एसिड अटेक' केस एक है। दिल्ली में प्रीति तथा अंकित तिवारी पडौसी थे। अंकित पढ़ने लिखने के बाबजूद कोई ढंग की नौकरी नहीं प्राप्त कर पाया था जबकि प्रीति को नेवी अस्पताल मुम्बई में लेफ्टीनेंट के रूप में स्वास्थ्य सेवाओं में काम करने का अवसर मिला। अंकित के परिवारी जन प्रायः प्रीति का उदाहरण दे अंकित को ताना मारते थे। धीरे-धीरे अंकित के मन में ईर्ष्या का भाव इतना प्रबल हो गया कि उसने प्रीति को मुम्बई जाकर नौकरी करने से मना किया और जब प्रीति ने बात नहीं मानी तो उसका मुम्बई तक पीछा कर उस पर एसिड फैंक दिया। एक महीने अस्पताल में जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष करते हुए आखिर प्रीति ने दम तोड़ दिया। अभी हाल में एक अदालत ने अंकित को मृत्युदंड सुनाया है। तो ईर्ष्या-द्वेष किस प्रकार आपके जीवन को विनष्ट कर सकता है यह उक्त केस से स्पष्ट है। अपराध विशेषज्ञ व मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि ईर्ष्या-द्वेष अधिकांश अपराधों के मूल में प्रेरक तत्त्व होते हैं ।

ब्रुकलिन की घटना है। टियाना ब्राउन हालात का शिकार थी। उसे जिस घर में शरण मिली तीसरे दिन ही उसने शरणदात्री की बेटी को चाकू से ४६ वार करके मार दिया, कारण कि उसे ईर्ष्या हो गयी कि मृतका के पास शानदार जूते थे जो उसके पास नहीं थे।

ईर्ष्या केवल वस्तुओं को लेकर ही नहीं आपकी अच्छाईओं को लेकर भी हो सकती है। सर्वाधिक नजदीकी संबंधों में भी ईर्ष्या जन्म ले सकती है इसीलिए गुरु -शिष्य भी प्रतिज्ञाबद्ध हो कहते हैं - **'माविद्विषावहै'** - हम एक दूसरे से द्वेष न करें ।

ईर्ष्या का काम जलाना है मगर सबसे पहले वह उसी को जलाती है जिसके हृदय में उसका जन्म होता है।

अथर्ववेद में कहा है-

अग्नेरिवास्य दहतो दावस्य दहतः पृथक्।
एतामेतस्येर्ष्यामुद्गाग्निमिव शमय।। - अथर्ववेद ७/४५/२

जंगल में जब आग लगती है तो सारे वन को जला देती है। उस आग की लपेट से न वृक्ष बचते हैं , न पौधे, न पशु ,न पक्षी। मृग भी उसमें जल मरते हैं और सिंह भी। पत्थर तक चटक जाते हैं। यह दावानल कैसे उत्पन्न होता है? बांस या उस जैसे वृक्ष वायु से आंदोलित होकर , हिल-डुलकर एक दूसरे से टकराते हैं, तो उनकी पारस्परिक टक्कर से, रगड़ से आग पैदा होती है। वह आग सबसे पहले उन्हीं को जलाती है, भस्म करती है जिनसे उत्पन्न होती है। यही अवस्था ईर्ष्या की है। यह सबसे पहिले उन्हीं का नाश करती है जिनमें यह पैदा होती है अतः ईर्ष्या दूसरे को तो जब नुकसान पहुँचाएगी तब पहुँचाएगी परन्तु ईर्ष्यालु को तो तुरन्त नुकसान पहुँचाती है। ईर्ष्या छूत के रोग की भांति है। ईर्ष्यालु दूसरों में भी ईर्ष्या भाव का संचार कर देता है। अर्थात् ईर्ष्यालु समाज के लिए ऐसा है जैसे जंगल में आग लगाने वाला। तात्पर्य यह है कि चाहे परिवार हो, समाज हो, समुदाय हो, संगठन हो अगर वहाँ ईर्ष्यालुओं का अस्तित्व है तो अंततोगत्वा वह संगठन को अपार हानि पहुँचाएगा ही।

ईर्ष्या तुलना से पैदा होती है। हम हमेशा दूसरों के साथ तुलना में लगे रहते हैं। किसी और के पास ज्यादा अच्छा मकान है,

किसी और के पास ज्यादा सुंदर शरीर है, किसी और के पास अधिक पैसा है, किसी और के पास करिश्माई व्यक्तित्व है, जो भी हमारे आस-पास से गुजरता है, हम उससे अपनी तुलना करते हैं , जिसका परिणाम बहुत अधिक ईर्ष्या की उत्पत्ति में फलित होता है क्योंकि इस तुलना में भी 'हम भी प्रयत्न पूर्वक वैसा बनें' की अपेक्षा 'सामने वाला उन चीजों से वंचित हो जाय' यह कामना होती है। वस्तुतः इस तुलना को ही समाप्त करना होगा , हम हम हैं और वह वह है। हम जैसे हैं ठीक हैं।

न किसी से ईर्ष्या न किसी से होड़।
मेरी अपनी मंजिलें मेरी अपनी दौड़।।
क्यों तू अपने आप से नाराज रहता है सदा।
तुझमें जो खूबियाँ हैं वे औरों में न मिल पाएँगी।।

अतः व्यक्ति से ईर्ष्या भाव का नाश होना ही चाहिए। निरन्तर सद्ग्रंथों के अध्ययन, सत्पुरुषों के सत्संग से अत्यन्त प्रयत्न पूर्वक ही इस प्रवृत्ति को दूर किया जा सकता है।

एक और विचित्र स्थिति यह है कि हम यह मानने को तैयार ही नहीं होते कि हमारे अन्दर ईर्ष्या की प्रवृत्ति है। इसके लिए एक टेस्ट है। हम आत्मनिरीक्षण करें कि हमारे से ज्यादा गुणी, संपन्न व्यक्ति को देखकर , दूसरों से उसकी प्रशंसा सुनकर हमारे अन्दर प्रसन्नता का उदय होता है या नहीं। अगर नहीं तो कहीं कुछ गड़बड़ अवश्य है। और प्रसन्नता तो दूर अगर दुःख, अप्रीति अथवा कुढ़न पैदा होती है तो समझ जाना चाहिए कि ईर्ष्या ने हमें अपने चंगुल में जकड़ लिया है। दूसरों के गुण-श्रवण कर हम दिल से प्रसन्नता का अनुभव करते हैं या नहीं यह देखना होगा। आभासी प्रसन्नता से काम नहीं चलेगा।

ईर्ष्या की अति में द्वेष का जन्म होता है जो नाना प्रकार के अपचार हमसे कराता है। हमारे व्यक्तित्व को समूल नष्ट कर देने वाले इस रोग से अत्यन्त सतर्कतापूर्वक हम बचते रहें इसी से महर्षि दयानन्द सरस्वती ने दैनिक संध्या के अंतर्गत 'मनसा परिक्रमा' में छः मन्त्रों का समावेश किया है जिसमें प्रत्येक में द्वेष भाव को परमात्मा के न्याय में रखते हुए उससे दूर रहने का संकल्प किया जाता है। इस प्रकार सुबह शाम मिलाकर हम १२ बार परमात्मा की साक्षी में द्वेष को दूर रखने हेतु सन्नद्ध होते हैं।

ईर्ष्या द्वेष ने संगठनों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। व्यक्ति से उसकी खुशी छीन ली है। इससे पूर्व कि वह अपनी प्राप्ति से प्रसन्न होने का प्रयास करे दूसरे की उपलब्धि उसे व्यथित कर देती है। अगर प्रसन्नचित्त समाज का निर्माण करना है तो ईर्ष्या को समूल नष्ट करना अपरिहार्य है। सत्संगति से उत्पन्न अत्यन्त मूल्यवान विवेक-जल से ही ईर्ष्या का शमन संभव है।

- अशोक आर्य
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०९००१३३९८३६

नवलखा महल में नवनिर्मित ''आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा'' एवं सत्यार्थ प्रकाश स्तम्भ के बारे में दर्शकों के विचार

मुझे स्वामी जी (महर्षि दयानन्द सरस्वती) जी की जीवनी को जानने का अवसर प्राप्त हुआ। इनके जीवन चरित्र को जानकर मन अति प्रसन्न हुआ। ये एक ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने हमारे देश व देश में फैले पाखण्ड एवं बुराईयों को दूर करने में अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। हमें आज के समय में इनकी सभी बातों को स्वीकार कर जीवन में उतारना चाहिए। जिससे हम भी समाज व राष्ट्र के हितार्थ कार्य कर सकें एवं जीवन का आनन्द उठा सकें।

इस दीर्घा को देखकर बहुत आनन्द आया और मैं यहाँ से प्राप्त शिक्षा को अपने जीवन में भी उतारने का प्रयास करूँगा। धन्य हो ऋषिवर दयानन्द।

- भेरू लाल, उदयपुर

सच्चे सुख की चाह अगर हो,
अगर चाहिए जग में मान।
हर पल करें नेक काम और,
सबको दें सम्मान।।

सत्यार्थ सौरभ
घर-घर पहुँचावें

सत्यार्थ सौरभ के वर्तमान ग्राहकों के लिए रियायती योजना

आपकी सदस्यता को यदि आप पंचवर्षीय सदस्यता में परिवर्तित करते हैं तो चार सौ की बजाय केवल तीन सौ रु. भेज दें तो आपको पंचवर्षीय सदस्यता सूची में नामित कर लिया जायेगा। इसी प्रकार अगर आप आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं तो बजाय एक हजार रु. के मात्र नौ सौ रु. प्रेषित करने का श्रम करें तो आपको आजीवन सदस्यता सूची में सम्मिलित कर लिया जायेगा।

महर्षि दयानन्द नाम-गौरव

आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय

आज हम समस्त शास्त्रों के आदर्श, करुणाजल के आधार, गुणरूपी वृक्षों के उपवन, विद्यावतारों के तीर्थ, न्याय मार्ग के बोधक, उत्साह रूपी पहिए की धुरी, सत्य के सखा, धीरता के स्थान, स्थिति के परम धाम, आश्रय सत्य के सेतु, अनाथों के नाथ, दरिद्रपालक, पतित मनुजोन्नति-निपुण, धर्म धुरन्धर महर्षि दयानन्द सरस्वती के नाम के अर्थ गौरव का रहस्य उद्घाटित करने जा रहे हैं।

जैसाकि सुधीजनों को विदित है कि ऋषि ने अपने नामार्थ द्योतन के लिए एक श्लोक 'पञ्चमहायज्ञविधि' में स्वयं लिखा है जो अन्य ग्रन्थों अर्थात् 'संस्कारविधि' तथा 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' में कुछ परिवर्तन के साथ ज्यों का त्यों प्राप्त होता है। ऋषि ने इस श्लोक का अर्थ मात्र इतना ही किया है कि- 'सब सज्जन लोगों को यह बात विदित हो कि जिनका नाम स्वामी दयानन्द सरस्वती है, उन्होंने इस ग्रन्थ को रचा।' पर काव्य रसिकों के लिए इतने मात्र से सन्तोषानुभूति नहीं होती क्योंकि कोई भी शब्द बिना वृत्ति के अर्थ बोध नहीं कराता। वृत्ति का अर्थ है- शब्दनिष्ठव्यापार। अभिधेय अर्थ का बोध कराने के लिए अभिधावृत्ति मानी जाती है। लक्ष्यार्थ-बोध के लिए लक्षणावृत्ति। किन्तु कहीं कहीं लाक्षणिक तथा वाचक शब्द एक विशेष अर्थ की प्रतीति कराते हैं जो अर्थ लक्षणा या अभिधा का विषय नहीं बन सकता। शब्द से इस प्रकार की विशेष अर्थ की प्रतीति कराने वाला शब्द व्यापार व्यञ्जना व्यापार कहा जाता है। यह व्यञ्जना भी शब्दाश्रिता- शाब्दी कही जाती है। उस अर्थ व्यञ्जन से युक्त शब्द व्यञ्जक होने के कारण अर्थ की सहकारिता होने से अर्थ भी व्यञ्जक है। अतः व्यञ्जना दो प्रकार की है- शाब्दी और आर्थी।

आर्थी व्यञ्जना में वाच्यादि अर्थ ही प्रधानतया अन्य अर्थ का व्यञ्जक होता है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि शब्द की व्यञ्जना होती ही नहीं। वस्तुतः शब्दार्थयुगल ही काव्य है। जब शब्द और अर्थ दोनों ही विशेष अर्थ की प्रतीति कराते हैं तभी कोई काव्य ध्वनि काव्य कहलाता है।

यह आर्थी व्यञ्जना वाच्यादि अर्थों से भी वक्तृवैशिष्ट्य आदि के कारण सहृदयों को एक विशेष अर्थ की प्रतीति कराया करती है, उस विशेष अर्थ की प्रतीति कराने वाले ये अर्थ ही होते हैं। वे वाच्यादि अर्थ वक्तृवैशिष्ट्यादि आदि के कारण विशेष (प्रतीयमान) अर्थ की प्रतीति सहृदयों को कराते हैं- वह अर्थव्यापार ही आर्थी व्यञ्जना है। साधारणजनों को यह अनुभूति नहीं होती- अपितु काव्यभावना से परिपक्व बुद्धि ही इस अर्थ रस के रसिक होते हैं।

श्लोक निम्न प्रकार हैः-

दयाया आनन्दो विलसति परः स्वात्मविदितः,
सरस्वत्यस्याग्रे निवसति मुदा सत्यनिलया।
इयं ख्यातिर्यस्य प्रकटसुगुणा वेदशरणा,
स्त्यनेनायं ग्रन्थो रचित इति बोद्धव्यमनधाः।।
(पञ्चमहायज्ञविधिः)

दयायाः शब्दात् परः आनन्दः विलसति-अयमानन्दः स्वात्मविदितः=अर्थात् दयायाः-आनन्दः-इति दयानन्दः। दया का आनन्द- दयानन्द है। यह दया का आनन्द क्या है? दयानन्द शब्द का अर्थानुवाद दयामयानन्द है। कैसे? इसकी व्याख्या से समझ आयेगा।

ईश्वर ने मनुष्यों में जितना सामर्थ्य रखा है, उतना पुरुषार्थ अवश्य करने का आदेश है। उसके उपरान्त ईश्वर के सहाय की इच्छा रखनी चाहिए। क्योंकि मनुष्यों में सामर्थ्य रखने का ईश्वर का यही प्रयोजन है कि मनुष्यों को अपने पुरुषार्थ से ही सत्य का आचरण करना चाहिए।

यथा चक्षुषमन्तं दर्शयति नान्धं च; एवमेव धर्मं कर्तुमिच्छतं पुरुषार्थ कारिणमीश्वरानुग्रहाभिलाषिणं प्रत्येवेश्वरः दयालुः-कृपालुर्भवति नान्यं प्रतिचेति।' जैसे कोई मनुष्य आँख वाले को किसी चीज को दिखला सकता है, अन्धे को नहीं, क्योंकि ईश्वर ने धर्म को करने के लिए बुद्धि आदि बढ़ने के साधन जीव के साथ रक्खे हैं। जब जीव उनसे पूर्ण पुरुषार्थ करता है तब परमेश्वर भी अपने सब सामर्थ्य से उस पर कृपा=दया करता है। इस पर प्रमाणस्वरूप यजुर्वेद अध्याय ११ के दो मंत्रों पर दृष्टिपात कीजिए-

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरत्॥ - यजु. ११/१

अर्थात् योग को करने वाले मनुष्य तत्व अर्थात् ब्रह्मज्ञान के लिए जब अपने मन को पहिले परमेश्वर में युक्त करते हैं तब परमेश्वर उनकी धियम्= बुद्धि को अपनी कृपा से अपने में युक्त कर लेता है। फिर वे परमेश्वर के प्रकाश को निश्चय करके यथावत् धारण करते हैं। पृथिवी के बीच में योगी का यही प्रसिद्ध लक्षण है। (दयानन्द सरस्वती भाष्य)

दूसरा मंत्र भी देखिये

युक्त्वाय सविता देवान्स्वर्यतो धिया दिवम्।
बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान्॥ - यजु. ११/२

अर्थात् वह परमेश्वर देव भी उपासकों को अत्यन्त सुख को दे के उनकी बुद्धि के साथ अपने आनन्दस्वरूप प्रकाश को करता है, तथा वही अन्तर्यामी परमात्मा की अपनी कृपा से उनको युक्त करके उनके आत्माओं में बड़े प्रकाश को करता है और जो सब जगत् का पिता है, वही उन उपासकों को ज्ञान और आनन्दादि से परिपूर्ण कर देता है। परन्तु जो मनुष्य सत्यप्रेम भक्ति से परमेश्वर की उपासना करेंगे, उन्हीं उपासकों को परम कृपामय अन्तर्यामी परमेश्वर मोक्षसुख देके सदा के लिए आनन्दयुक्त कर देगा। (दयानन्द सरस्वती भाष्य)

बहुत स्पष्ट है कि दयानन्द ने अपनी मातृकुक्षि से जन्म लेकर संसार में पदार्पण कर अत्यन्त पुरुषार्थ के साथ सत्य धर्माचरण में ही रत् रहकर प्रभु की कृपा=दया प्राप्त की। ऐसे पुरुषार्थियों उपासकों पर दया करना जिसका स्वभाव ही है, ऐसे दया के भण्डार अर्थात् जिससे अधिक दया का प्राचुर्य

किसी के पास नहीं-उस अन्तर्यामी ने उस ऋषि आत्मा को अपने में युक्त करके जो ज्ञान वा आनन्द दिया है= यही दयामय-आनन्द है। इसी दयामय आनन्द से परिपूर्ण वह ऋषि दयानन्द है। **तो इससे स्पष्ट हो गया= कि 'दयाया आनन्दः' का अर्थ हुआ 'दयामयानन्दः'।**

दयानन्द शब्द में निहित गूढार्थ की आर्थी अभिव्यञ्जना को साहित्य सुधा समुद्र में अवगाहन किए हुए, सरस्वती हृदयभूतसार के समुत्थित अनेक काव्यालंकार अलंकृत मानसों में काव्य प्रयोजनों के अद्भुत प्रयोक्ता, ब्रह्मचर्य धारणपूर्वक धृति क्षमास्तेय शौच सत्याक्रोधादि से पूर्वोपार्जित पुण्यपुञ्ज परिपाक प्राप्त धी सरस्वती के वरदपुत्र संस्कृत कविता कामिनीकान्त श्री पंडित अखिलानन्द शर्मा के 'दयानन्द दिग्विजय' नामक महाकाव्य में दयानन्द नाम पर अर्थ वैचित्र्य से युक्त काव्य वैचित्र्य का स्वारस्य आनन्द लीजिए-

दयामयानन्दविशेष वर्धनाद्,
भुवस्तले यो नितरामुदारधीः।
ततान नामानुणां निजाभिधां
गुरुर्दयानन्द इति प्रकल्पिताम्।

श्री महाकवि अखिलानन्द शर्मा के (दयानन्द दिग्विजयम्) श्लोक का अर्थ सुगम है। पर श्री महाकवि अखिलानन्द शर्मा के वक्तृवैशिष्ठ्य से विशेष अर्थ की प्रतीति सहृदयों को स्वभाविकतया अपनी ओर आकृष्ट कर ही रही है। विशेष अर्थ की प्रतीति करानेहारे ये अर्थ ही होते हैं। इस प्रकार के विशेष अर्थों की प्रतीति प्रतिभा सम्पन्नों को ही होती है। काव्य की भावना से जिनकी बुद्धि परिपक्व हो जाती है। नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा जिन्हें पूर्वार्जित पुण्यपुञ्जों से मिली है, उन्हीं काव्यरसिकों को विशेष अर्थ की प्रतीति होती है।

श्रीमान् अखिलानन्द शर्मा धन्य हैं जिन्होंने रस से युक्त, अलंकारों से अलंकृत, दोष रहित, गुणयुक्त काव्य का सृजन किया। 'सरस्वती कण्ठाभरण' अद्भुत ग्रन्थ में जो लक्षण स्थापित किए हैं उन्हीं के अनुसार रस शब्द से ब्रह्मानन्द ग्रहण किया, न कि विषयानन्द। उपनिषद् के **'रसो वै सः रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति'** का परिपालन किया। अलंकार शब्द से-उपमा, रूपक, साम्यादि का ग्रहण, दोष शब्द से असंभव आदि दोषों का ग्रहण कर-गुण-प्रसाद-ओज, कान्ति माधुर्य-औदार्य-सौकुमार्य आदि सब का समावेश कर महाकवि पदवी प्राप्त कर साधारण शब्दों में अपनी तीक्ष्ण बद्धि रूपी अभ्रिः=कुदाली से अर्थ रत्न देकर साहित्य सुधियों को सुधा समुद्र में अवगाहन कराया है।

पुनः प्रतीयमान विशेष अर्थ की ओर लौटते हैं। अन्तर्यामी ईश्वर के दयामय-आनन्द के विशेष वर्धन से-पृथिवी तल पर उदारधी=उदारमति दयानन्द ने अपने गुणों के अनुरूप अपने निज-अभिधा को फैलाया-अपने नाम को चरितार्थ किया। आप कह सकते हैं कि अर्थ कल्पना प्रसूत स्वोद्भूत है। नहीं! मित्रवर! यह आनन्द स्वात्मविदित शब्द से व्यवहृत कर

समस्त अर्थ को खोल दिया। स्वात्मविदित-का अर्थ है-मेरे आत्मा का भी आत्मा परमात्मा से विदित है अर्थात् ब्रह्मविदित है। यह ब्रह्मविदित शब्द स्वामी जी ने भ्रान्ति निवारणार्थ 'संस्कार विधि' के श्लोक में स्वयं लिखा है। अब आप कहिए- 'ब्रह्मविदित' का क्या अर्थ होगा?

तो स्पष्ट है कि 'ब्रह्मविदितः' का अर्थ ब्रह्म से विदित है चूँकि आनन्द ब्रह्म के ही पास है- जैसे लोहा अग्नि में पड़कर अग्निमय हो जाता है- वैसे दयानन्द का आत्मा ब्रह्म में युक्त होकर आनन्दयुक्त हो गया। उसी पर दयानन्द फूले नहीं समा रहे हैं-कह रहे हैं- ईश्वर की दया से प्राप्त वह आनन्द जिसे ब्रह्म ने मुझे विदित कराया है, वही दयामयानन्द-दयानन्द है।

इस दयानन्द शब्द का वाच्य वह स्वयं है। यह संकेतकृत वाच्य-वाचक सम्बन्ध प्रदीप प्रकाशवत् अवस्थित है। दयानन्द स्वयं प्रदीप हैं और प्रकाश उनका 'नामानुगणां निजाभिधां' है जिसको उन्होंने संसार में 'ततान' अर्थात् फैलाया है। जैसे कोई कहे- यह इसका पिता है और यह इसका पुत्र है। जैसे यह वाच्य-वाचक-सम्बन्ध संकेत से अवद्योतित है- इन दयानन्द से उत्पन्न पुत्र रूपी गुणों से दयानन्द ही जाना जाता है और कोई नहीं। संसार में इतने खिलगुण किसी में भी नहीं पाए जाते। यह गुणों पर एक कलंक था पर दयानन्द का आत्मा प्रभु के प्रकाश से युक्त देख गुणों ने एक-एक करके दयानन्द-प्रवेश किया। दयानन्द सब गुणों की खान भी बन गए। गुणों पर लगा कलंक भी मिट गया।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि दयानन्द सरस्वती में 'सरस्वती' क्या है? इसमें समास क्या है? अगर हम यह अर्थ करें कि दयानन्द की सरस्वती, तो दयानन्द की कोई सरस्वती होती नहीं। अतः इस सामासिक रहस्य से भी पर्दा ऋषि ने स्वयं उठा दिया। यह लिखकर विद्वद्जनों को बौद्धिक श्रम से राहत तो दे दी परन्तु विशेष अर्थ प्रतीति में श्रम तो करना ही होगा। ऋषि ने इसी छन्द के द्वितीय चरण में लिखा- **'सरस्वत्यस्याग्रे निवसति मुदा सत्यनिलया।'**

इस दयानन्द= दयामयानन्द सुनाम के आगे जो सरस्वती- वह हर्ष के साथ ठहरी हुई है। वह हंस=परमहंस जो सत्य ब्रह्म है उसमें ही निवास करती है अर्थात् उस ईश्वर की शरण में ही रहती है, 'सत्यनिलया= **'सत्यं बह्म एव आश्रयो यस्यासा सत्यनिलया' अस्य दयानन्दस्य अग्रे सरस्वती मुदा हर्षेण सह तिष्ठति**- यहाँ पर 'अग्रे' पद का लोप हो गया है। इसी से दयानन्द सरस्वती नाम हुआ।

इस पर भी महाकवि अखिलानन्द शर्मा जो किसी के बनाए हुए मार्ग पर चलना-जड़ बुद्धियों का कार्य बताते हैं-कवि-सिंह और सुपुत्र तीनों औरों के लिए स्वयं मार्ग बनाते हैं। रास्ता बनाने वाला स्वयं रास्ते से अलग चलता है- ऐसे ही कवियों को रास्ता बनाने वाला अपने काव्य में सर्वतोगमनबन्ध, षोडशदलकमलबन्ध, गोमूत्रिका छत्रबन्ध, हारबन्ध, चक्रबन्ध, चतुर्दलकमलबन्ध और कविगणों के कवित्व में व्यामोह उत्पन्न करने हेतु व्योमबन्धनादि अनेक बन्धों का समावेश करने वाली महाकवि के अपूर्व ज्ञान का दर्शन कीजिए-

सरस्वती यस्य सदावतिष्ठते,
सुनामधेयाग्र पदेति शोभना।
समस्त वेदार्थ परीयसी कथं,
न तिष्ठनाद् ब्रह्मपरे स देवराट्।।

अर्थात् जिसके सुनाम के आगे समस्त वेदार्थ को जानने वाली सरस्वती सर्वदा विराजमान रहती है, वे देवराज विद्वानों में श्रेष्ठ होने के कारण ब्रह्मापदवी को क्यों न प्राप्त हो?

इयं ख्यातिर्यस्य प्रकट सुगुणा वेदशरणा-
स्त्यनेनायं ग्रन्थो रचित इति बोद्धव्यमनघाः।

अर्थात् यह दयानन्द सरस्वती की ख्याति प्रसिद्धि है इस ख्याति का प्रधान कारण वेदशरण अर्थात वेदार्थज्ञान है। जिसके प्रकाश से शोभन गुण प्रकट हुए। हे निर्दोष महानुभावो! ऐसा तुम जानो कि दयानन्द सरस्वती यह जिसकी ख्याति है- प्रसिद्धि है, उसने यह पञ्चमहायज्ञविधि नामक ग्रन्थ रचा। ऐसा चारों वेदों का ज्ञाता प्रभु की दयास्वरूप प्राप्त आनन्द दयामयानन्द=दयानन्द सब संसार उपकार करने की इच्छा से दया करने वाला आनन्द का साक्षात्कर्त्ता हंस से परमहंस पदवी को प्राप्त परमविद्वान् सरस्वती दयानन्द सरस्वती कहलाया। ऐसा यह दिव्य पुरुष परमात्मा की दया वा कृपायुक्त शक्ति=इच्छा संकेतशक्ति से यंत्रवत् संचालित मात्र संसार के उद्धार के लिए ही आया था। यह थोड़ा सा विद्वानों के चित्त-हर्ष के लिए लिखा है।

२४३, अरावली अपार्टमेन्ट
प्रथम तल, अलकनन्दा, नई दिल्ली

आर्य परिवारों के विवाह सम्बन्ध एक सामूहिक कर्तव्य

आर्य समाज के सिद्धान्तों व वैदिक जीवन मूल्यों का थोड़ा-सा ज्ञान रखने वाला प्रत्येक आर्य जानता है कि जातिवादी सोच के कारण यह देश लम्बी अवधि तक पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा रहा। स्वाधीन होने के बाद भी हमारे राजनेताओं के कारण जातिवाद का रोग बढ़ता गया। उनके लिए यह वोट बैंक का हथकंडा बनकर रह गया। आरक्षण इस जातिवाद का मोहक रूप बनकर आज मेरे देश के लिए भयंकर समस्या बनकर रह गया है। जब ७०-८० प्रतिशत अंक लेने वाला युवक अयोग्य घोषित होकर बाहर कर दिया जाये और वह ३५-४० प्रतिशत अंक पाने वाले को अपने स्थान पर चयन होते देखता है तो कोई बताये कि वह इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष का शंखनाद क्यों न करे? ऐसा करना देश व समाज को नष्ट करने वाला काम है। पूर्व काल में शूद्र व दलित कहलाने वालों के साथ जितना अन्याय हुआ था, यह आरक्षण उससे कम नहीं है। योग्यता व प्रतिभा का पहले भी अपमान होता था, आज भी होता है। पहले यह काम पुराणपंथी पोंगा पंडित करते थे आज वोटपंथी नेता यह पाप कर रहे हैं। जातिवाद का विष इतना फैल गया है कि आरक्षण पर चर्चा करना ही जातीय संघर्ष की संभावना पैदा कर देता है, ऐसे में इसे समाप्त करके प्रतिभाशाली युवकों के साथ न्याय करने की बात या आर्थिक दृष्टि से पिछड़े व दलितों के लिए आरक्षण की बात करना ही कितना भयंकर होगा यह सरलता से समझा जा सकता है।

मैं जातिवाद या आरक्षण से उत्पन्न अनर्थों की चर्चा करना नहीं चाहता, मुझे जातिवाद को सैद्धान्तिक रूप से बिल्कुल न मानने वाले आर्यों को एक बात यह समझानी है कि अगर

हम आर्यों के जीवन व्यवहार से जातिवाद का विष न निकला, हम इससे ऊपर उठकर ऋषि मान्यता, वेद वर्णित वर्ण व्यवस्था के अनुसार अपने पुत्र पुत्रियों के विवाह संस्कार करने कराने की हिम्मत न दिखा सके तो ऋषि का जीवन भर का तप-त्याग व्यर्थ-सा हो जायेगा। ये माना कि सत्य और उसके लिए किया गया तप कभी नष्ट नहीं होता लेकिन हमारी गिनती उस भाग्यहीन पीढ़ी के रूप में होगी जो ऋषि के तप त्याग और अमर बलिदान से कोई लाभ न उठा सकी। सुधी आर्यों! क्या हमें वेद व अपने वैदिक ऋषियों के वचनों पर विश्वास है? सच्चे अर्थों में आर्य तो वे ही हैं जो नित्य संध्या, स्वाध्याय व यज्ञ आदि करके अपने जीवन को आर्य बनाते हुए तथा वैदिक वर्ण व्यवस्था के अनुसार अपने पुत्र पुत्रियों का विवाह संस्कार कर, अपनी आने वाली सन्तान को भी वैदिक धर्मी बनाने के लिए प्रयास कर रहे हैं। मैंने जातिवाद से ऊपर उठकर स्व-सन्तान का विवाह करने को संकल्पित अपने विद्वानों को देखकर संकल्प लिया था कि मैं भी जाति-पाँति तोड़कर वैदिकधर्मी परिवारों से स्व-सन्तान का विवाह करूँगा। मैं तो इस दिशा में लगा ही हूँ लेकिन अभी मेरी भेंट ऐसे ही एक पुराने मित्र से हुई जो कि इसके लिए लम्बे समय से प्रयत्नशील हैं। चर्चा करते हुए उन्होंने बताया कि जातिप्रथा से ऊपर उठकर गुण, कर्म, स्वभाव के मेल से आर्य परिवारों में विवाह करना आज आकाश से तारे तोड़ लाने जितना कठिन हो गया है। ऋषि का कहना तो यहाँ तक था कि अगर घर में सेवक भी रखना हो तो जहाँ तक संभव हो सके वहाँ तक आर्य विचारों का ही रखें तथा आर्य सेवक भी सेवा के लिए आर्य परिवार को ही प्राथमिकता दे। इधर हम हैं कि परिवार के स्थायी सदस्य के लिए भी आर्य विचारों-संस्कारों की चिन्ता नहीं करते। इस संबंध में ऋषि लिखते हैं-'ब्रह्मचर्य विद्या के ग्रहणपूर्वक विवाह सुधार से ही सब बातों का सुधार और बिगड़ने से बिगाड़ हो जाता है।' अन्यत्र लिखा है-'सो विवाह वर्णानुक्रम से करें और वर्ण व्यवस्था भी गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार होनी चाहिए। हमें इस ऋषि आदेश पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

हमारे अभिन्न मित्र ने बताया कि वे अपने पुत्र-पुत्रियों का

पण्डित रामनिवास 'गुणग्राहक'

विवाह संस्कार वैदिक परिवारों में करने के लिए लम्बे समय से अपने आर्य मित्रों से सहयोग माँग रहे हैं लेकिन कोई सार्थक सहयोग मिलना अभी शेष है। कारण है कि लोक परम्परा के अनुसार पुत्री का पिता ही योग्य घर-वर ढूंढ़ने निकलता है, ऐसे में पुत्र का पिता संस्कारी पुत्रवधू के लिए प्रयास करता है तो लोग सोचते हैं कि कोई गड़बड़ है, ऐसे में उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखते। उन्होंने बड़ी सुन्दर बात कही कि पुत्री के पिता के लिए अच्छा घर-वर ढूंढ़ना जितना आवश्यक है उससे कहीं अधिक आवश्यक है पुत्र के पिता के लिए एक सुशील सुसंस्कारित पुत्रवधू की खोज करना। कारण पुत्रवधू उसके परिवार की सदस्य बनेगी, उसके परिवार का सुखद भविष्य ही जिस पर निर्भर हो उस वधू की खोज करना दूरदृष्टि है न कि दुर्बलता। आर्यों को यह बात समझनी चाहिए कि आर्यों का आर्य परिवारों में विवाह संस्कार करने कराने में पूरा सहयोग करना चाहिए। उन्होंने कन्या गुरुकुल की आचार्याओं से भी सहयोग माँगा है। प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा में हैं। अगर हमें कोई ऐसा विज्ञापन दिखता है या कोई व्यक्तिगत रूप से ऐसा कहता है तो हम आर्यों को अवश्य सहयोग करना चाहिए, ऐसा करना हमारा आर्योचित सहयोग है।

यह सच है कि आर्य समाज युवक युवतियों के सामूहिक परिचय सम्मेलन करवा कर इस दिशा में अच्छा काम कर रहा है लेकिन किन्हीं कारणों से उनमें भाग लेना कुछ आर्यों को रुचिकर नहीं लगता। ऐसे में पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञापन व परस्पर की चर्चाओं से भी इस दिशा में बहुत काम हो सकता है। कन्या गुरुकुलों की आचार्या बहनें भी इस पर अवश्य विचार करें। वैदिक काल में विवाह सम्बन्धों में उनकी भूमिका रहती थी, ये सब जानते हैं। आज उस वैदिक परम्परा को पुनर्जीवित करने में कुछ समस्याएँ तो आ सकती हैं लेकिन परिणाम बहुत अच्छे प्रकट होंगे। एक अत्यन्त उपयोगी, करणीय कर्तव्य की ओर सुधी आर्यों का ध्यान आकर्षित करने की भावना से जो लिखा है उस पर आर्योचित रीति से विचार करते हुए सभी आर्यजन गुण-कर्म-स्वभाव के मेल से विवाह करने के इच्छुक आर्यों का उत्साहपूर्वक समर्थन व सहयोग करें। ऐसा करना हम सबका सामूहिक कर्तव्य है। आर्य समाज की पत्र-पत्रिकाएँ वैवाहिक विज्ञापन प्रकाशित करते ही हैं। लेखक स्वयं एक मासिक पत्र का सम्पादक है, कोई आर्य पुरुष अपने पुत्र-पुत्रियों के वैवाहिक विज्ञापन देना चाहे तो निम्न पते पर प्रेषित करें।

पण्डित रामनिवास 'गुणग्राहक'
सम्पादक-गुरुकुल दर्शन
वेद प्रचार विभाग, गुरुकुल कुरूक्षेत्र (हरियाणा) १३६११९

वैवाहिक विज्ञापन

२६ वर्षीय जाट युवक, लम्बाई ५, ८.९ इन्च, रंग गोरा, उत्तम स्वास्थ्य, शिक्षा एम.ए. दर्शन तथा योग, डी.ए.वी. में योग-अध्यापक (वेतन २५०००) के लिए गुरुकुल-शिक्षिता वैदिक धर्म के प्रति श्रद्धावान कन्या की आवश्यकता है।

सम्पर्क- ०८६८९००१२१०/०७५९७८९४९९१

(जाति-बंधन नहीं)

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

"सत्यार्थ-भूषण" पुरस्कार

₹ 5100

कौन बनेगा विजेता

- न्यास की मासिक पत्रिका सत्यार्थ सौरभ का सदस्य होना आवश्यक है।
- हल की हुयी पहेली अन्तिम तिथि से पूर्व न्यास कार्यालय में पहुँचे यह सुनिश्चित करें।
- अपना सत्यार्थ सौरभ सदस्यता क्रमांक हल की हुयी पहेली के ऊपर अवश्य अंकित करें।
- लिफाफे के ऊपर 'सत्यार्थप्रकाश पहेली क्रमांक' अवश्य अंकित करें।
- १२ शुद्ध हल प्रेषित करने वालों में से एक चयनित विजेता को 'सत्यार्थ-भूषण' की उपाधि, प्रमाण-पत्र तथा ₹५१०० नकद प्रदान किए जावेंगे।
- आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
- विश्व भर के लोगों से सत्यार्थ सौरभ मासिक पत्रिका के अन्तर्गत 'सत्यार्थकाश पहेली' में भाग लेने का अनुरोध है।

नवीन नियम

- वर्ष भर में एक (१) के स्थान पर चार (४) पुरस्कारों के साथ ही नियमों में सकारात्मक परिवर्तन कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि वर्ष में एक बार भाग लेने वाले/अथवा एक बार ही सफलता प्राप्त करने वाले भी पुरस्कार से वंचित न हों।
- पहेली का सही हल प्रेषित करने वाले प्रतिभागियों को ४ भागों में विभक्त किया जावेगा।
  - (अ) सम्पूर्ण वर्ष में समस्त १२ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (ब) सम्पूर्ण वर्ष में ८ से ११ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (स) सम्पूर्ण वर्ष में ५ से ७ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (द) सम्पूर्ण वर्ष में १ से ४ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
- वर्षान्त में प्रत्येक समूह में से एक विजेता का चयन (लाट्री द्वारा) किया जाकर पुरस्कृत किया जावेगा।
- पुरस्कार राशि क्रमशः ₹५१००, ₹११००, ₹७०० तथा ₹५०० होगी। अन्य सभी नियम पूर्वानुसार।

ऋचाओं में निरूपित वैयक्तिक नैतिक कर्तव्य

भारतीय दर्शन में मोक्ष की प्राप्ति जीवन का चरम अभीष्ट माना गया है। इसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु विधाता ने अपनी सर्वोत्कृष्ट सृष्टि मनुष्य को सुदुर्लभ तन, बुद्धि, विवेक, ज्ञान, कर्म करने की अनन्त शक्तियाँ और असीम ऊर्जा प्रदान की है। अतः मनुष्य के कर्म श्रेष्ठ तथा शास्त्रविहित होने चाहिए, जिससे वह अपने जीवन के परम अभीष्ट को प्राप्त कर सके। वैदिक ऋषि भी श्रेष्ठ कर्म करते हुए शतायु होने की कामना करते हैं।

मनुष्य अपने जीवन में सर्वविध व्यवहारों का उत्तमता के साथ निर्वाह कर सके, एतदर्थ सदाचरण अपेक्षित होता है। सत्य-भाषण, वैचारिक शुद्धता, उत्तम चरित्र, दृढव्रत इन समग्र गुणों के बिना समाज में सामञ्जस्य नहीं होता अतः वेदों में उल्लिखित उपदेशों की आवश्यकता होती है। वैदिक उपदेशों को आचार-शिक्षा और नैतिक शिक्षा दो पृथक् भागों में विभक्त किया गया है। आचार शिक्षा का सम्बन्ध वैयक्तिक जीवन से है। इसमें आत्मोन्नति के साधनों पर बल दिया गया है। आचार की आधारशिला नैतिकता है। वस्तुतः धर्म के मूल में नैतिकता ही है। नैतिकता का सर्वोच्च आदर्श विशेष नियम को मानना नहीं है अपितु एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चेष्टा करना है। यह लक्ष्य स्वयं को विवेकयुक्त बनाना है तथा तदनुसार अपने आचरण को परिष्कृत करना है।

डॉ. राधाकृष्णन् उसे अच्छा मनुष्य स्वीकार करते हैं जो दिव्य उद्देश्य के साथ संगति रखता है तथा बुरा मनुष्य वह है जो उसका विरोध करता है। इन्होंने मानवीय आचरण का लक्ष्य आन्तरिक स्वच्छता माना है। (उपनिषदों की भूमिका पृ. १०)

मनुष्य का उत्थान और पतन उसके द्वारा किए जाने वाले कर्मों पर आधारित होता है। सत्कर्मों से उसका उत्थान होता है और दुष्कर्मों से उसका पतन होता है। अतः वेदों में यह शिक्षा दी गई है कि सद्गुणों का अपने जीवन में आधान करें और दुर्गुणों को त्यागें।

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आसुव।

– ऋग्वेद – ५/८२/५

सद्गुणों को अपनाने और दुर्गुणों को त्यागने के लिए मन और बुद्धि की पवित्रता की आवश्यकता होती है। आत्मिक शुद्धि के पश्चात् व्यक्ति सदाचारी होता है। एतदर्थ हमें ब्रह्ममुहूर्त में जागना चाहिए तथा अपने अभीष्ट की प्राप्ति हेतु श्रद्धापूर्वक प्रभु-स्तुति करनी चाहिए ।

प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति तं चिकित्वान्प्रतिगृह्या नि धत्ते।
तेन प्रजां वर्धयमान आयू रायस्पोषेण सचते सुवीरः।।

– ऋग्वेद १/१२५/१

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।। – ऋग्वेद १०/१५१/५

यद्यपि वैदिक वाङ्मय विविध नीति रत्नों का विशाल सागर है पुनरपि विषय-विस्तार से बचने के लिए मैंने केवल वैयक्तिक नीतियों को ही अपने शोध-पत्र के विषय के रूप में अधिकृत किया है।

वैदिक नीति का आधारभूत तत्व ऋत है, जो एक शाश्वत नियम है, वैश्विक स्तर पर प्रकृति का नियम है जैसा कि मैकडॉनल ने भी कहा है- 'ऋत प्रकृति में व्याप्त शाश्वत नियम है।' यही शब्द नैतिकता के सन्दर्भ में सत्य एवं यथार्थ के रूप में व्यवस्था का निर्देश करता है। तथा धार्मिक जगत् में यह यज्ञ अथवा यागादि पद्धतियों का वाचक बन गया है। अन्यच्च- 'ऋत एक शाश्वत नियम तथा सीधा मार्ग है जिस पर चलकर ज्योति प्राप्त की जा सकती है।'

अभूदु पारमेतवे पन्था ऋतस्य साधुया। अदर्शि वि स्त्रुतिर्दिवः।

– ऋग्० १/४६/११

ऋग्वेद के एक मन्त्र में सात मर्यादाओं का उल्लेख है। जिनमें से एक का भी उल्लंघन करने वाला व्यक्ति पापाचारी होता है। इसके विपरीत जो धैर्यपूर्वक इन हिंसादि पापों को छोड़ देता है वह निस्सन्देह जीवन का स्तम्भ (आदर्श) है और मोक्षगामी होता है।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात्।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीळे पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ।।

– ऋग्वेद १०.५.६

अर्थात् हिंसा, चोरी, व्यभिचार, मद्यपान, जुआ, असत्य-भाषण और इन पापों को करने वालों का असहयोग, इनसे स्वयं को दूर रखना ही सात मर्यादाएँ हैं।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में काम, मद, लोभ, मत्सर, मोहादि विकारों की पशु-पक्षियों की प्रवृत्तियों से तुलना करते हुए इन्द्र से प्रार्थना की गई है कि इन्हें व्यक्तित्व से दूर कर दीजिए। (ऋग्. ७/१०४/२२) इन हिंसादि बाह्य तथा कामादि अन्तर्दुर्वासनाओं के त्याग से ही मनुष्य उत्तम सामाजिक हो सकता है। इनमें सत्य की महिमा महान् है।

ऋग्वेद में हिंसा के विषय में कहा गया है- हे अग्नि! हिंसक व्यक्ति के यज्ञ में न आओ। हिंसक के परिश्रम से उपार्जित धन का हम उपभोग न करें। (ऋग्. ६/७५/१६)। जहाँ हिंसा होती है वहाँ देवता नहीं जाते क्योंकि वहाँ असुरत्व उपस्थित हो जाता है।

वेद में चौर कर्म, जिसके कारण समाज में असुरक्षा का भय व्याप्त हो जाता है, को निन्दित मानते हुए प्रभु से प्रार्थना की है कि समाज का शत्रु वह चोर सशरीर और सपरिवार नष्ट हो जाये।

वैयक्तिक नैतिक उत्थान हेतु ऋग्वेद के मन्त्रों में व्यभिचारादि दुष्ट कर्मों के त्याग करने की शिक्षा दी गई है। ऋग्वेद में मद्यपान को आचरणहीनता का कारण कहते /बताते हुए मद्यपान तथा द्यूतक्रीड़ा का निषेध किया गया है।

जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित्।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति॥

- ऋग्वेद १०/३४/१०

सत्य की महत्ता को स्वीकार करते हुए ऋग्वेद में उल्लिखित है कि जहाँ विद्वान् लोग अपनी वाणी को मन से शुद्ध करके बोलते हैं, वहीं पर लक्ष्मी और मित्रता ठहरती है।

यजुर्वेद के एक मन्त्र में सत्यव्रत के पालन की इस प्रकार प्रतिज्ञा है कि मैं यथाशक्ति सत्य का पालन करूँगा और असत्य से दूर रहूँगा। सत्य-भाषण से स्वभाव में कोमलता आती है अतः व्यक्ति का अपने कर्मों से विनाश हो जाता है।

वेदों में कहा गया है कि मनुष्य के दोनों हाथों में ऐश्वर्य है। दोनों हाथ एक-दूसरे से ज्यादा भाग्यशाली हैं।

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः॥

- ऋग्वेद १०/६०/१२, अथर्व ४/१३/६

वेद की शिक्षा है कि मनुष्य के उत्थान के दो साधन हैं- जीवनशक्ति और पुरुषार्थ। उनके आश्रय से व्यक्ति अमरत्व प्राप्त कर सकता है। एतदर्थ उसे सदैव जागरूक रहना चाहिए।

यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
अग्निर्जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥

- ऋग्वेद ५/४४/१४, १५

इसका कारण बताया गया है कि अकर्मण्य मनुष्य सदा सोता रहता है, आलस्य करता है, अवसर पर कार्य नहीं करता है और ईश्वर पर विश्वास नहीं करता है। एक मन्त्र में पाप के कारणों का उल्लेख किया गया है तथा पापों से बचने के लिए परमात्मा की शरण एकमात्र साधन माना गया है।

धर्मार्थकाममोक्ष चार पुरुषार्थों में धन की आवश्यकता धर्म और काम को सम्पादित करने के लिए होती है। धन की प्राप्ति के लिए मनुष्य को पुरुषार्थी होना पड़ता है अर्थात् श्रीवृद्धि पराक्रम से ही सम्भव है तथा मनुष्य के हाथ माध्यम हैं।

स्वावलम्बन से मनुष्य के गौरव में वृद्धि होती है। उसी व्यक्ति का उत्थान होता है जो स्वयं उद्यमी होता है। उद्यम से सफलता प्राप्त होती है इच्छाएँ करने मात्र से नहीं। ऋग्वेद के एक मन्त्र में मरुद्गण का अपने सामर्थ्य से अन्तरिक्ष में अपने लिए स्थान का वर्णन है। सुदृढ़ मनोबल कार्यसिद्धि का प्रमुख साधन है। संलग्नता, अटूट विश्वास और निष्ठा मनुष्य को चतुर्दिक् सफलता प्रदान करती है। वह धन, विद्यादि सभी प्रकार के ऐश्वर्यों से ऐश्वर्यवान हो जाता है।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में यही कहा जा सकता है कि मनुष्य में अच्छाइयाँ तथा बुराइयाँ दोनों ही विद्यमान होती हैं तथा दोनों एक दूसरे में इस प्रकार संश्लिष्ट होती हैं कि उनको विविक्त करना सरल नहीं। जो व्यक्ति अभ्यास और प्रयत्न से अपने जीवन से असत् को निकाल देगा उसका जीवन तप्त कुन्दन की भाँति उज्ज्वल होगा। निष्कर्षतः ऋग्वेद की नैतिक भावनाएँ सद्कार्यों को करने की प्रेरणा देती हैं तथा असत् की ओर गमन करने वाले का मार्ग भी अवरुद्ध करती हैं।

- डॉ. उमा शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, एन. ए. एस. कॉलेज, मेरठ
साभार- पावमानी

पुनर्जन्म से जीव की क्रमिक उन्नति

जन्म और मृत्यु का प्रश्न जनसाधारण के लिए ही नहीं बल्कि बुद्धिजीवियों के लिए भी सदा से ही एक विचारणीय विषय रहा है। कुछ लोग बताते हैं कि व्यक्ति संसार में पैदा होता है और मरने के बाद पूरा किस्सा ही समाप्त हो जाता है मगर कुछ का मानना है कि शरीर के मरने के बाद भी जीवात्मा का अस्तित्व बना रहता है और उसके द्वारा किए गए कर्मों के आधार पर उसका पुनर्जन्म अवश्य होता है। कठोपनिषद् में युवक नचिकेता इसी रहस्य को यमाचार्य से जानने की जिज्ञासा करते हुए कहता है:-

येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्येऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं, वराणामेष वरस्तृतीयः॥

- कठोपनिषद् १.२०

मनुष्य के मर जाने पर जिज्ञासा रहती है- कोई कहते हैं कि मरने पर भी मनुष्य बना रहता है, कोई कहते हैं नहीं बना रहता। आपसे शिक्षा पाकर मैं इसका समाधान जानना चाहता हूँ। मुझे जो वर माँगने हैं उनमें तीसरा वर यही है। पहले तो यमाचार्य उस नचिकेता की अनेक प्रकार की परीक्षा लेते हैं मगर बाद में आगे चलकर आत्मा की अमरता का संदेश देते हुए कहते हैं-

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥

- कठ. उ. २.१८

यह चेतन जीव न उत्पन्न होता है, न मरता है न यह किसी कारण से उत्पन्न हुआ है, न पहले कभी उत्पन्न हुआ था। यह अजन्मा है, नित्य है, निरन्तर है, पुरातन है; शरीर के मरने पर भी यह नहीं मरता।

साधारण व्यक्ति के मन में यह बात उतरती नहीं है क्योंकि भले ही वेद, उपनिषद् तथा गीता आदि ग्रन्थों में आत्मा को अजन्मा और अनादि कहा गया है मगर लोगों के मनों में यह धारणा बन जाती है और चूँकि वे व्यक्ति का जन्म और मृत्यु होते हुए प्रतिदिन देखते हैं इसलिए जन्म-मृत्यु की पहेली तो मन में फिर भी बनी ही रहती है। वास्तविकता यह है कि आत्मा तो अजर व अमर ही है मगर जन्म और मृत्यु हमारे शरीर की होती है। इस प्रकार शरीर का ही निर्माण होता है और नाश भी शरीर का ही होता है। हम कह सकते हैं कि जिसमें अर्थात् जिस व्यवस्था में किसी शरीर के साथ संयुक्त होके जीव कर्म करने में समर्थ होता है, उसे जन्म कहते हैं और जिस शरीर को प्राप्त होकर जीव क्रिया करता है उस शरीर और जीव का किसी काल में जो वियोग हो जाना है, उसको 'मरण' कहते हैं।

वेदादि सत्यशास्त्रों में पुनर्जन्म की बात को बताया गया है, अतः इस व्यवस्था को न मानने वाले नास्तिक कहे जायेंगे। क्योंकि मनु जी ने कहा है- **'नास्तिकोवेदनिन्दकः'** अर्थात् वेद को न मानने वाले नास्तिक हैं। पाणिनि के अनुसार जिस विषय में किसी व्यक्ति का विचार उस विषय को स्वीकार करने में है तो उस विषय की दृष्टि से वह आस्तिक कहा जायेगा। यदि व्यक्ति का विचार विषय को अस्वीकार करने में है तो उस विषय की दृष्टि से वह नास्तिक होगा। उनका कथन है-

अस्ति मतिरस्य आस्तिकः। नास्ति मतिरस्य नास्तिकः॥ न च मतिसत्तामात्रे प्रत्यय इष्यते, किं तर्हि परलोकोऽस्तीति यस्य मतिरस्ति स आस्तिकः॥ तद्विपरीतो नास्तिकः॥

इस प्रकार शास्त्रकारों की व्यवस्थानुसार जो परलोक अर्थात् पुनर्जन्म को स्वीकार करता है, वह आस्तिक तथा जो ऐसा नहीं मानता वह नास्तिक है। इस अर्थ को ऐसे भी कहा जा सकता है- जो आत्मा को देह आदि के अतिरिक्त मानकर नित्य सदा विद्यमान रहने वाला स्वीकार करता है वह आस्तिक तथा जो ऐसा नहीं मानता, वह नास्तिक है। अब विचारणीय यह है कि जब आत्मा का देह से अतिरिक्त अलग अस्तित्व है तो देह के छूट जाने के बाद उस आत्मा का क्या होता है? अन्ततः यही बात स्वीकार करनी होगी कि जन्म भी शरीर का होता है और मृत्यु भी शरीर की ही होती है। अतः आत्मा अपने कर्मों के अनुसार अनेक गतियों (=योनियों=Various classes of birth and rebirth) को प्राप्त होता रहता है तथा इसे ही आवागमन या पुनर्जन्म कहा जाता है। यहाँ यह बात भी मनन करने योग्य है कि पुनर्जन्म आत्मा का नहीं होता बल्कि आत्मा को कर्मानुसार मानवदेह या अन्य-अन्य शरीर मिलते रहते हैं..

..

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी आत्मा को 'अमर' ही माना जा

सकता है क्योंकि वैज्ञानिकों द्वारा 'ऊर्जा-संरक्षण-सिद्धान्त' (The Theory of Conservation of Energy) के आधार पर इस बात को सिद्ध किया जा चुका है कि किसी भी वस्तु का कभी नाश नहीं होता है बल्कि वह अपना स्वरूप बदलती है- कपड़ा भले ही घिस-घिसकर धूल बन जायेगा मगर पदार्थ उतने का उतना ही रहेगा, वह नष्ट नहीं होगा। यदि वैज्ञानिक, भौतिक जगत् में इस सिद्धान्त को सत्य मानते हैं तो आध्यात्मिक जगत् में भी इस सिद्धान्त को सत्य मानना पड़ेगा और इस सिद्धान्त के अनुसार आत्मा उत्पन्न नहीं होता और वर्तमान में उसकी सत्ता है तो आगे यह अपना रूप ही बदल सकता है, कभी नष्ट नहीं हो सकता। आत्मा का शरीर से अलग अस्तित्व है तथा शरीर के पैदा होने से पूर्व और मरने के बाद भी इसका अस्तित्व बना रहता है। अतः इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि यह कहीं से आता है और कहीं को चला जाता है। इसे इसका रूप बदलना कहा जा सकता है और यही पुनर्जन्म है.....पुनर्जन्म के पक्ष में अनेक हेतु हैं जैसे आत्मा नित्य है इसलिए उसका नाश नहीं हो सकता। वेद उपनिषद्, मनुस्मृति, दर्शन, गीता आदि ग्रन्थ इसी बात का अनुमोदन करते हैं। कर्मफल व्यवस्था (the system of delevery of result of one, s action/deeds) के आधार पर भी पुनर्जन्म सिद्ध होता है। परमात्मा की न्याय व्यवस्था और शक्तिमता से भी पुनर्जन्म की ही पुष्टि होती है। जीव के सामर्थ्य भेद से भी यही बात सिद्ध होती है। यहाँ हम कहना चाहते हैं कि जीव की क्रमिक उन्नति (gradual or successive progress) का आधार भी पुनर्जन्म ही है।

"किसी भी समाज, राष्ट्र या परिवार में जहाँ किसी बड़े का भय समाप्त हो जाता है, वहाँ पर उत्पात ही पैदा होता है।"

यदि हम पुनर्जन्म के सिद्धान्त को हटा दें तो जीव के क्रमिक विकास की कल्पना तक नहीं की जा सकेगी। वास्तव में ईश्वरीय व्यवस्था में अच्छे और बुरे कर्मों का फल जीव के अपने ही क्रमिक विकास के लिए दिया जाता है। आवागमन के इस चक्र में ही जीव का विकास होने की संभावना बनी रहती है। यदि केवल एक ही जन्म मान लिया जाये तो परमात्मा भी न्यायकारी नहीं रहेगा क्योंकि हर व्यक्ति को सुधरने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए तथा व्यक्ति को भी असफल होने पर पुनः सफल होने का प्रयास करना चाहिए। आवागमन में परमात्मा ने यही व्यवस्था कर रखी है। नीच से नीच व्यक्ति को भी निरन्तर सुधरने का अवसर मिलता रहता है। अर्जुन को जब श्रीकृष्ण योग-ध्यान की बातें बताते हैं तो उसके मन में एक शंका पैदा हो जाती है जिसे उसने श्रीकृष्ण के सामने रखा कि यदि मुझे इस जन्म में पूर्णरूप से योग की सिद्धि न मिली और बीच में ही प्राणान्त हो गया तो मेरे उस किए गए प्रयास का क्या लाभ होगा? भगवान श्रीकृष्ण ने इसका बहुत ही सार्थक उत्तर देते हुए कहा कि जीवात्मा पर जो अच्छे व बुरे संस्कार पड़ जाते हैं वे कभी भी नष्ट नहीं होते हैं। व्यक्ति को उसका फल अवश्य मिलता है। वे अर्जुन को आश्वस्त करते हैं:-

'जिस स्थान को पुण्यशाली लोग पाते हैं उसे पाकर, वहाँ बहुत समय तक रहने के उपरांत यह योग भ्रष्ट व्यक्ति पवित्र और श्रीमान् लोगों के घर में जन्म लेता है; अथवा वह बुद्धिमान् योगियों के कुल में जन्म लेता है। श्रीमान् लोगों के स्थान में योगियों के कुल में ही जो जन्म लेता है वह तो इस संसार में और भी दुर्लभ है। हे कुरुनन्दन! वहाँ वह पूर्वजन्म के 'बुद्धि-संयोग' को (संस्कारों को) फिर पा जाता है और (जहाँ से पहले छोड़ा था) वहाँ से फिर संसिद्धि (मोक्ष) पाने के लिए यत्न करता है। वह अपने पिछले जन्म के अभ्यास के द्वारा विवश सा होकर योग की ओर खिंचता है क्योंकि योग का जिज्ञासु तक भी सकाम विधि-विधान करने वाले से, शब्द-ब्रह्म तक सीमित रह जाने वाले से, ब्रह्म की मात्र शाब्दिक चर्चा करने वाले से आगे निकल जाता है।

इस बात को ऐसे समझा जा सकता है कि हम किसी स्थान के लिए प्रस्थान करते हैं मगर कुछ ही दूर जाने के बाद रात हो जाती है और हमें रुककर वहीं विश्राम करना पड़ता है। अब प्रातःकाल हमारी यात्रा उस स्थान से आगे आरम्भ होगी जहाँ हमने रात्रि को विश्राम किया था, न कि वहाँ से जहाँ से हमने यात्रा आरम्भ की थी। वहाँ तक का मार्ग तो हमने तय कर लिया है। इस प्रकार आवागमन का सिद्धान्त व्यक्ति की क्रमिक उन्नति (gradual or successive progress) का आधार है। आवागमन के सिद्धान्त को मानने से व्यक्ति के भीतर एक आशावादी विचारधारा पैदा होती है। यदि हमारी समूची व्यवस्था में कर्मफल सिद्धान्त को निकाल दिया जाए तो व्यक्ति पापों की ओर अधिक झुकेगा, उसके भीतर स्वेच्छाचारिता के भाव पैदा होंगे और वह प्रत्येक कार्य में मनमानी पर उतर

जायेगा। किसी भी समाज, राष्ट्र या परिवार में जहाँ किसी बड़े का भय समाप्त हो जाता है, वहाँ पर उत्पात ही पैदा होता है। जब किसी के मन में यह विश्वास ही नहीं होगा कि उसे अच्छे कार्यों के लिए पुरस्कृत और बुरे कार्यों के लिए दंडित किया जायेगा तो व्यक्ति अच्छे कार्य करेगा क्यों?

महात्मा नारायण स्वामी जी इस सम्बन्ध में लिखते (कर्मरहस्य) हैं- 'यह प्रसिद्ध बात है जिसे प्रायः सभी जानते हैं कि मनुष्य-योनि कर्म करने और फल भोगने दोनों की योनि है, परन्तु अन्य पशु-पक्षी आदि की योनियाँ केवल फल भोगने के लिए हैं। इन भोग वाली योनियों में जाने ही से मनुष्य का सुधार हुआ करता है। मनुष्य की जितनी भी इन्द्रियाँ हैं, सदुपयोग करने के वास्ते मिली हैं। एक उदाहरण से यह बात साफ हो जायेगी।

मनुष्य को आँखें देते हुए सृष्टिरचयिता परमात्मा ने शिक्षा दी है कि इनसे सभी को मित्र की दृष्टि से देखो, किसी के लिए भी देखते हुए तुम्हारे हृदय में ईर्ष्या-द्वेष की भावना न हो। एक मनुष्य इस शिक्षा पर आचरण नहीं करता, सदैव या अक्सर आँखों का दुरुपयोग करता है, समझाना बुझाना उसके लिए सब बेकार है। अब बताओ उसका सुधार किस प्रकार हो? उसके सुधार का अब इसके सिवा कोई तरीका नहीं रहा कि उस व्यक्ति को आँख से काम लेने से ही रोक दिया जाए। आवागमन से ज्ञान यही होता है कि वह यदि मनुष्य योनि में पैदा होगा तो अन्धा पैदा होगा उसके कर्म और भी दूषित हैं तो फिर किसी ऐसी योनि में पैदा होगा जो चक्षुरहित हैं। किसी कर्म को करने से करने का, और न करने से न करने का, अभ्यास हुआ करता है- इसे सभी जानते हैं। इसलिए उस प्राणी की आँख का काम बन्द हो जाने से आँखों को जो ईर्ष्या, द्वेष से

देखने का अभ्यास था आदत हो गई थी वह जाती रही और व्यक्ति सुधरी हुई आँखों के साथ फिर मनुष्य योनि में पैदा हो जाता है।

यह तो उन्होंने एक उदाहरण दिया है इसी बात को हम अन्य योनियों आदि के रूप में भी समझ सकते हैं तथा इसी प्रकार जीव धीरे-धीरे क्रमिक विकास (gradual or successive progress) करता हुआ मोक्ष प्राप्ति तक पहुँच सकता है। शास्त्रों के अनुसार ईश्वरीय व्यवस्था में जीव को संसार में भोग और अपवर्ग के लिए भेजा जाता है। अपने कर्मानुसार ही व्यक्ति भोग को भोगता हुआ या अपने पूर्वकृत कर्मों के फल भोगता हुआ भी निरन्तर मुक्ति के उपाय करता रहे क्योंकि बार बार के जन्म-मरण के चक्कर से बचने का केवल यही एक उपाय है। आत्मा को तृप्ति भी वहीं पर मिल सकती है अन्यथा वह तृप्ति की तलाश में भटकता ही रहेगा।

साभार- वेदवाणी मासिक अक्टूबर २०१४

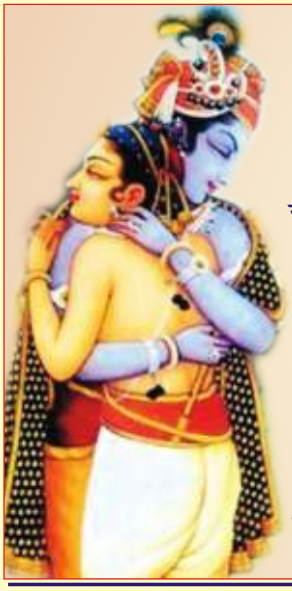

'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ'

कहाँ-कहाँ खोजूँ मैं उसको,
किसके दरवाजे पर जाऊँ
'जो मेरे चावल खा जाए'
'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ।'
जीवन की इस कठिन डगर में,
दोस्त हजारों मिल जाते हैं,
जो मतलब पूरा होने पर,
अपनी राह बदल जाते हैं।
हरदम साथ निभाने वाला,
साथी ढूँढ कहाँ से लाऊँ।।
'जो मेरे चावल खा जाए'
'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ।'
'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ।'
हार सुनिश्चित मालुम थी पर,
साथ न छोड़ा दुर्योधन का,
मौत सामने आई फिर भी, पैर न पीछे हटा कर्ण का।
मित्रों पर जो जान लुटाएँ, कहाँ खोजने उनको जाऊँ।।
'जो मेरे चावल खा जाए' 'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ।'
दर्द बयाँ करने पर आए, वे तो साथी कहलाते हैं,
मन की बात समझ जाए जो, वे ही मित्र कहे जाते हैं।
जिनसे मन के तार जुड़ें वो, किस कोने से ढूँढ के लाऊँ।।
'जो मेरे चावल खा जाए' 'ऐसा मित्र कहाँ से लाऊँ।'
कविता सुनकर बीवी बोली, क्यों नाहक चिन्ता करते हो,
जो घर में ही हाजिर है, तुम उसको बाहर क्यों तकते हो।
मैं ही तो हूँ कर्ण तुम्हारी, और कृष्ण भी मैं ही तो हूँ,
अंधकार में साथ न छोड़े, वो परछाईं मैं ही तो हूँ।
मुट्ठी में जो चावल हैं, मुझको दे दो, मैं खा जाऊँगी,
अगले 'सात जन्म' की खातिर, मित्र आपकी बन जाऊँगी।।
'मैं आपकी मित्र बन जाऊँगी'।

Salient feature of Manusmriti

Dr. Ramesh Gupta

Contd.... from previous Issue

Here are the details about some of the topics discussed in Manusmṣti.

1. Dharma: Some famous shlokas which define and detail dharma are as follows.

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥ - मनु. ६/९२

Which means: patience, forgiveness, control over your mind, not stealing, cleanliness of body, mind and soul, restrain on your senses, proper use of intellect, proper knowledge of God, soul and nature, honesty, and control over your anger. This probably is the

most perfect definition of religion or Dharma. **It is hard to believe that a sage who is advocating such high level of human conduct would try to divide the society.**

Yet another perfect definition of Dharma has been given by Sage Manu in his teachings:

वेद स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥ - मनु. २/१२

This shloka incorporates 4 principles, which if practiced constitutes dharma.

a. Vēda: this means that the code of conduct, or Dharma, of a person be according to Vaidik (Vedic) teachings. Since these teachings remain unchanged regardless of person, place or situation and are eternal, so is the case with teachings of Manusmṣti.

Take an example of how Sage Manu intended to help humanity at a very grassroots level.

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेव च॥ - मनु. २/१२

Manu ji says that if the rays of sun fall on a person who is sleeping, it is deleterious to his or her health. It has been well-established that waking up early is very good for physical and mental well-being of all of us.

b. Smrti: the second principle is that we should obey the teachings of Sṣti literature. The Vedas define and detail the overall code of conduct as it relates to humanity as a whole, whereas theSṣti literature focuses primarily on the national level. It is however necessary that the citizens of a nation also follow the universal laws as well. If such a practice of human values is adhered to by all, there will be no wars and, therefore, no armies needed. The world would simply be a more harmonious place. It must be stated, however, that the local situation differs from country to country. Climate is one example and certain human behavior will be based on local conditions. Manusmrti, while directing the overall social code of conduct, respects the given situation of a nation. It is clearly stated that no code of conduct of a person be contradictory to the constitution of their nation and be against their national interest.

c. Sadācār: the conduct of good people be analyzed in-depth. Although the conduct of respected persons may be well-hearted, it should not come in the way of national progress, as well as should be in accordance with a given situation.

d. Svasya Ca Priyaḥ Ātmanaḥ: A person should act according to his/her inner conscience especially in difficult situations. One should think first and then act righteously. This is the 4th and most important dogma of life. **We should avoid actions that we would not wish upon ourselves.** If everyone acts according to inner feelings based on the principle described above, a person's life would be greatly improved, leading to better family, nation, and society. Manu has stated that people should live according to the highest state of righteousness.

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

This means that any act that brings fear, doubt and shame, cannot be, according to the desire of inner self.

Vedas are the root of whole practice of Dharma.

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।

आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ।। - मनु. २/६

Honest interaction defined:

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।। - मनु. ४/१३८

A person should speak the truth and do so pleasantly for the well-being of society and avoid what is untrue simply to please others. This is Sanātana Dharma, the

Eternal Law. Also there is another verse that states one should never embarrass another who has a physical disability or lack of knowledge, among other conditions.

Never destroy Dharma:

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्।। - मनु. ८/१५

Dharma destroys anyone who seeks to destroy It and Dharma protect anyone who protects It. Therefore, Dharma must never be destroyed for Dharma destroyed, destroys us.

Dharma is the only companion after death:

नामुत्र हि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः।
न पुत्रदारा न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलः।। - मनु. ४/२३९

After death, neither father, nor mother, nor spouse, nor children, nor any other relative or a friend remains a companion. **Dharma alone remains with us.**

2.Different segments of society: Sage Manu ji advocated 4 divisions of society called Varna Vyavasthā, and it was based on the individual's ability, rather than birth. These Varṇas were Bhraman, Kṣatriya, Vaiśya and Śūdra, which denoted the people who would be educators and spiritual guides, those who would maintain the economics and trade, those who would rule and protect, and finally those who would serve the above three segments in society. Anyone who would have a certain level of ability was free to move from one Varṇa to another. One such śloka is:

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवं तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।। - मनु. १०/६५

The meaning of this śloka is that based on the actions and ability, people would become Brāhmaṣ a, Kṣatriya or Vaiśya and if they lack an ability required to become any one of these, they would remain as Śūdra. Even Bhagvad Gītā has mentioned the same social setup based on a person's ability and actions.

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। -गीता ४/१३
जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् भवेत् द्विजः।
वेद पाठात् भवेत् विप्रः ब्रह्म जानातीति ब्राह्मणः।। -यास्क मुनि

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्।। -मनु. १/८८

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः।। -मनु. १/८९

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।। -मनु. १/९०

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुःकर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया।। -मनु. १/९१

A Brahmin should teach without deceit and with affection and impart proper knowledge according to Vaidik (Vedic) teachings. A Kṣatriya should have the quality of protecting society in every conceivable way and give the gift of fearlessness while maintaining their daily lifestyle which includes performance of Agnihotra and control over senses. A Vaiśya should be able to carry on business while sharing a portion of earned wealth with the rest of society, as well as possess knowledge of Vedas and agricultural or other trades, and live a righteous life. A Śūdra should have a strong physical build and be able to serve without resentment.

A Brahmin can become a Śūdra if he/she fails to achieve true knowledge and propagate it in the society.

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः।। -मनु. २/१६८

It is obvious that somewhere along the line, people who got a certain level of authority wanted to hold on to it, and the caste system came into being. There are many examples of transformation from one Varṇa to the other through the history. Some of these are: SageVishwamitra,Kavaśa Ailuśa, Vidura, Dvāpī, Mudgala, Satyakāma Jābāla, Pṛṣadhra, Nābhāga, Agnivēśya, mātaṁga and Rāvaṇa. There have been many reformers, including Swami Dayanand Saraswati, to bring different segments of society together. It is the selfish and misguided people who have not allowed this movement to be very effective.

To be continued ....

M.D., F.A.C.P., F.A.C.G.
Email: rameshamita@gmail.com

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर विशेष

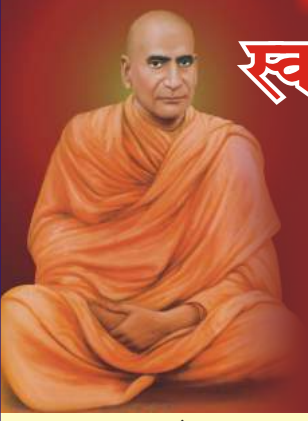

स्वामी श्रद्धानन्द और असहयोग आन्दोलन

महात्मा गाँधी ने जब असहयोग आन्दोलन की घोषणा की तो उस घोषणा ने जो कई अद्‌भुत चमत्कार किये, उनमें से एक यह भी था कि स्वामी श्रद्धानन्दजी को राष्ट्रीय संग्राम में लाकर खड़ा कर दिया। स्वामी जी इससे पूर्व प्रचलित राजनिति से अलग-थलग रहते थे। वह उसे अवसरवादिता की नीति समझते थे। महात्माजी की सत्याग्रह घोषणा होने पर जिन नेताओं ने तुरन्त सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करके महात्माजी को सहयोगसूचक तार भेजे, उनमें पहला नम्बर स्वामी श्रद्धानन्द का था। आपने महात्माजी को तार दिया-

'मैंने अभी-अभी सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। इस धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने से मैं बहुत प्रसन्न हूँ।'

घोषणा के दो दिन पीछे दिल्ली में सत्याग्रह कमेटी बन गई। जिसमें एक तिहाई संख्या मुसलमानों की थी। दिल्ली में सत्याग्रह कमेटी बनने का देश व्यापी प्रभाव हुआ। भारत के उत्तरी भाग में शायद ही ऐसा कोई नगर या ग्राम होगा जिसके प्रमुख आर्यसमाजी और राष्ट्रीय विचारों के मुसलमान सत्याग्रह संग्राम में न कूद पड़े हों।

महात्माजी के प्रारम्भ किये हुये सत्याग्रह आन्दोलन में सम्मिलित होने वाले मुसलमानों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। कुछ मुसलमान पहले से ही राष्ट्रीय विचार रखते थे। वे सत्याग्रह को देश की स्वाधीनता प्राप्त करने का एक उपयोगी साधन समझकर उसमें शामिल हो गए। बहुत से मुसलमान ऐसे भी थे जो टर्की की पराजय के कारण अंग्रेजों से नाराज थे। चाहे उनका विचार न हो कि खिलाफत का अन्त केवल अंग्रेजों ने ही किया है तो भी प्रायः सभी मुसलमानों का विश्वास था कि खलीफा की शक्ति को बचाना अंग्रेजों का कर्तव्य था और यदि अंग्रेज चाहते तो उसे बचा सकते थे। अंग्रेजों ने खिलाफत को समाप्त होने दिया, इस बात से भारतीय मुसलमान अत्यन्त रुष्ट थे। उनके महात्माजी के आन्दोलन में सम्मिलित होने का यह भी एक मुख्य कारण हुआ।

सत्याग्रह का मंगलाचरण इस घोषणा से किया गया कि ३० मार्च १९१९ के दिन देशभर में दुकानों तथा कारखानों की हड़ताल की जाय और सब लोग एक दिन का उपवास करके हृदयों को शुद्ध करें।

बाद में हड़ताल का दिन बदलकर छः अप्रैल कर दिया गया। परिवर्तन की सूचना समाचार पत्रों में जरा देर से निकली। दिल्ली की सत्याग्रह कमेटी परिवर्तन की सूचना प्रकाशित होने से पहले ही ३० मार्च के सम्बन्ध में सब आदेश और निर्देश निकाल चुकी थी इस कारण दिल्ली में भारत के अन्य स्थानों से एक सप्ताह पहले ही सत्याग्रह युद्ध का डंका बज गया। उस दिन की विस्तृत घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन डॉ. पट्टाभि के लिखे हुए 'कांग्रेस के इतिहास' से उद्धृत किया जाता है।

'इसलिये वहाँ ३० मार्च को ही जलूस निकला और हड़ताल हुई। इस दिन के जलूस का नेतृत्व श्रद्धानन्द जी कर रहे थे। उन्हें कुछ गोरे सिपाहियों ने गोली मारने की धमकी दी। इस पर उन्होंने अपनी छाती खोल दी और कहा- 'लो मारो गोली'। बस गोरों की धमकी हवा में उड़ गई लेकिन दिल्ली रेलवे स्टेशन पर कुछ झगड़ा हो गया जिसमें गोली चली और पाँच मरे तथा अनेक घायल हुये।'

जो लोग हताहत हुये उनमें हिन्दू भी थे और मुसलमान भी। इस घटना का शहर के वातावरण पर चमत्कारिक असर हुआ। हिन्दू और मुसलमान मिलकर घी-शक्कर हो गए। 'हम' शब्द की यह नई व्याख्या कि हमें 'ह' से हिन्दूओं और 'म' मुसलमानों का बोध होता है, ३० मार्च की सरकारी गोलियों की कृपा का ही परिणाम था। उस दिन दोनों जातियों के शहीदों का रक्त मिलकर एक हो गया।

दिल्ली में ३० मार्च की घटनाओं ने एक नये युग का सूत्रपात कर दिया। राष्ट्र की एकता के जो दृश्य दिखाई दिये, वे भारतवासियों के लिये भी नये थे, और सरकार के लिए भी। जब हिन्दू शहीद की अर्थी निकली तो उसे हकीम अजमल खां साहब ने कन्धा दिया और जब मुसलमान शहीद का जनाजा निकला तो उसके साथ कब्रिस्तान तक हिन्दुओं की भीड़ गई, जिसके नेता स्वामी श्रद्धानन्दजी थे। पं. रामचन्द्र महोपदेशक जैसे प्रख्यात् शास्त्रार्थ महारथी और मौलाना अहमद सईद जैसे मुसलमानों के सर्वसम्मानित वायज एक मंच पर आकर सरकार की दमन नीति की निन्दा कर रहे थे। एक दिन दिल्ली के अंग्रेज चीफ कमिश्नर ने शहर के हिन्दू तथा मुसलमान नेताओं को टाउनहॉल में शान्ति स्थापना के सम्बन्ध में परामर्श के लिये बुलाया। जब सब

लोग हॉल में पहुँच गये तो शहर में मशहूर हो गया कि वहीं पर स्वामी श्रद्धानन्दजी और हकीम अजमल खां साहब को गिरफ्तार कर लिया जाएगा। बस फिर क्या था? घंटाघर पर नागरिकों की अपार भीड़ इकट्ठी हो गई, जिसमें पहाड़ी धीरज के जाट और सदर के कस्साबों के मुखिया एक-दूसरे के हाथ में हाथ डालकर घोषणा कर रहे थे कि 'अगर ऐसा हुआ तो. .....'।

दिल्ली से उसी वर्ष के आरम्भ में हिन्दी का दैनिक पत्र 'विजय' निकलने लगा था। उसने आन्दोलन को बढ़ाने में पर्याप्त भाग लिया। वह दिल्ली का पहला राष्ट्रीय पत्र था।

छः अप्रैल को देश के अन्य अनेक नगरों में हड़ताल हुई। पंजाब की दशा अधिक नाजुक थी, इस कारण स्वामी श्रद्धानन्दजी और डॉ. सत्यपाल के आग्रह पर महात्माजी शान्ति स्थापित करने के हेतु पंजाब के लिये रवाना हो गए। सरकार को महात्माजी का पंजाब जाना अभीष्ट नहीं था, इस कारण उन्हें दिल्ली के समीप पलवल में रोककर बम्बई वापिस भेज दिया गया। उधर पंजाब में स्थान-स्थान पर उपद्रव और गोलीकाण्ड होने लगे। दिल्ली की परिस्थिति पर उन घटनाओं का गम्भीर असर पड़ा। शहर का सारा कारोबार बंद हो गया। जब सरकार ने और नेताओं ने हड़ताल खोलने को कहा तो दुकानदारों की ओर से उत्तर मिला कि पहले महात्मा गाँधी के दर्शन करा दो, फिर हड़ताल खुलेगी। हड़ताल १७ दिनों तक चली। अन्त में नेताओं के प्रयत्न से शहर का कारोबार जारी हो गया। पीछे से पता चला कि यदि हड़ताल कुछ दिन और चलती तो सरकार मार्शल लॉ लगा देना चाहती थी।

दिल्ली में परिस्थिति बहुत बिगड़कर भी हाथ से बाहर नहीं हुई, इसका श्रेय नगर के नेताओं और दिल्ली के चीफ कमिश्नर मि. बैटन दोनों को ही है।

– श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

आपकी लोकप्रिय पत्रिका सत्यार्थ सौरभ को सम्बल प्रदान करने हेतु **श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी** पूणे ने संरक्षक सदस्यता (₹११०००) ग्रहण की है। अनेकशः धन्यवाद

– अशोक आर्य, सम्पादक

आपकी लोकप्रिय पत्रिका सत्यार्थ सौरभ को सम्बल प्रदान करने हेतु **श्री भरत भाई** अहमदाबाद ने संरक्षक सदस्यता (₹११०००) ग्रहण की है। अनेकशः धन्यवाद

– भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थप्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित

सत्यार्थप्रकाश

अवश्य खरीदें।

अब मात्र आधी कीमत में ₹ ४०

घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थप्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर - 313001

३५०० रु. सैंकड़ा शीघ्र मंगवाएँ

₹5100 का पुरस्कार प्राप्त करें

''सत्यार्थ सौरभ'' के सदस्य बनें

अविलम्ब बहुप्रशंसित पत्रिका 'सत्यार्थ सौरभ' के सदस्य बनें, जो पहले से सदस्य हैं अपना नवीनीकरण करावें और सत्यार्थ सौरभ में छप रही 'सत्यार्थप्रकाश पहेली' में भाग लेने की पात्रता प्राप्त करें और पावें ₹5100 का पुरस्कार।

पूर्ण विवरण पृष्ठ १३ पर देखें।

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

- **सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो।** सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके, एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:-
- सत्यार्थप्रकाश के प्रचार हेतु कृपया निम्नानुसार सहयोग कर **लागत मूल्य से आधी कीमत में** सत्यार्थप्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

राशि	प्रतियों की संख्या	राशि	प्रतियों की संख्या
एक लाख रु.	दस हजार	७५०००	७५००
५००००	५०००	२५०००	२५००
१००००	१०००	इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे।	

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास | भंवरलाल गर्ग, कार्यालय मंत्री | डॉ.अमृत लाल तापड़िया, उपमंत्री-न्यास

प्रेरणा

हौसलों की उड़ान

टेट्रा अमीलिया सिंड्रोम एक ऐसी बीमारी है जिसके बारे में बहुत कम सुना गया है। टेट्रा का अर्थ चार होता है तथा एमेलिया का अर्थ है जन्म जात बीमारी जिसमें हाथ पैरों का विकास न हो। अर्थात् एक ऐसी जिनेटिक बीमारी जिसमें गर्भ में ही बच्चे की लिम्ब्स (Limbs) का विकास नहीं होता है। यही नहीं इसके साथ अन्य कई ऐसी चिकित्सकीय समस्याएँ शिशु के साथ जुड़ी होती हैं कि प्रायः इस बीमारी से ग्रसित शिशु कम ही जीवित बच पाता है।

हरेक माता-पिता अपनी सन्तान को सर्व-सुन्दर, सर्वगुण सम्पन्न देखना चाहते हैं। यह सोचकर भी दिल काँप जाता है कि ऐसा बालक या बालिका पैदा हो जो Tetra amilio syndrome से ग्रसित हो। जूली सेंगुइनो एक ऐसी ही बालिका है जो बिना हाथ-पैर के पैदा हुयी। माँ गिलेरिमिना कुछ दिनों तक तो समझ ही नहीं पायी कि मांस के इस लोथड़े का करे तो क्या करे? जूली के अन्य ४ भाई बहिन सामान्य हैं। जूली ऐसी होगी यह आशा तो नवजात की आशा की सुखद कल्पनाओं में खोयी गिलेरिमिना ने कभी स्वप्न में भी नहीं की थी। जब माँ कुछ सहज हुयी तो उसने एक संकल्प किया कि जूली को वह जहाँ तक संभव हुआ सामान्य बच्चों की भाँति जीना सिखाएगी और उसने अपना यह संकल्प पूरा भी किया। आज जूली यदि जीवित है और दुनिया में एक मिसाल के रूप में जानी जाती है तो उसका श्रेय उसकी माँ को निःसंदेह जाता है। इस माँ को जितना भी सराहा जाय, नमन किया जाय कम है। वस्तुतः हमारा तो यह मानना है कि जूली से पूर्व गिलेरिमिना की चर्चा होनी चाहिए। एक स्वस्थ बालक या बालिका के माता-पिता को भी उसे पाल पोस कर बड़ा करने तथा उसे उसके पैरों पर खड़ा करने में कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, कितना उत्सर्ग करना पड़ता है उसके वर्णन की आवश्यकता नहीं है फिर एक मांस के लोथड़े को बड़ा करना, उसे अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में भी जीवन जीते रहने की जिजीविषा से ओतप्रोत करना यह करिश्मा माँ ही कर सकती है और वह गिलेरिमिना ने किया और वह भी तब जब जूली के पिता ने जूली के जन्म के दो वर्ष बाद ही आत्महत्या कर ली थी।

हम समझते हैं कि आज वे माताएँ जो नितान्त छोटे-छोटे कारणों से अपनी बच्ची को किसी जंगल की झाड़ी में फैंक

आती हैं, उन्हें सबक लेना चाहिए, प्रेरणा लेनी चाहिए कि चाहे कुछ भी हो जाय अंतिम श्वांस तक माँ के कर्तव्य का निर्वहन करें, न कि पलायन।

सफलता प्राप्ति में कुछ भी बाधक नहीं हो सकता- जूली का बचपन इतना कठिन था कि कल्पना भी नही की जा सकती। दरिद्रता ने तो जैसे घर में डेरा डाल रखा था, उस पर जूली के पिता का क्रोधपूर्ण तथा हिंसात्मक व्यवहार जो केवल गिलेरिमिना तक सीमित नहीं था उसके भाई-बहिन भी इसके शिकार थे। पिता ने जब आत्महत्या की तो जूली नितांत बच्ची थी। पिता के मरने पर रोज-रोज के झगड़े भी बन्द हो गए थे पर जूली यह सब समझ नहीं पा रही थी। एक व्यक्ति अचानक बीच में से चला गया शायद इस बात ने उसे अवसाद में डाल दिया। यहाँ से उसकी माँ ने ही उसे उबारा। दरअसल जूली के जन्म पर ही डॉक्टर ने यह कह दिया था कि यह बच्ची सदैव बिस्तर पर ही रहेगी, परन्तु गिलेरिमिना के इरादे कुछ और थे। उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जूली को आत्म निर्भर बनाएगी। उसने सर्वप्रथम उसे बैठना सिखाया। बिस्तर बनाना, ब्रश करना आदि रोजमर्रा के कामों में जूली धीरे-धीरे आत्मनिर्भर होने लगी। उसे स्कूल भेजा जहाँ उसे एलियन की भाँति देखा ही नहीं जाता था वरन् कहा भी जाता था। सहपाठियों का दुर्व्यवहार असहनीय था। यहाँ तक कि शिक्षक भी उससे क्रूर व्यवहार करने में पीछे नहीं थे। एक बार एक अध्यापक ने उसे पाँच बार पाँच फ्लोर

चढ़ने-उतरने की सजा दी जो उसने कोहनियों के बल पर घिसटते हुए पूरी की। इस सबसे बचने के लिए उसने विद्यालय परिवर्तन भी किये, पर बदला कुछ भी नहीं। कई बार उसके मन में जीवन को समाप्त करने के ख्याल आते थे कि ऐसी जिन्दगी से क्या फायदा। पर हर बार एक फरिश्ता उसे बचा लेता था और वह थी उसकी माँ। जूली की जिन्दगी में पहिले ही क्या कम मुसीबतें थीं कि एक रूह को झकझोर देने वाला हादसा और घटित हुआ और वह हैवानियत की इन्तहां थी। जूली के साथ बलात्कार किया गया। ऐसे बचपन से आखिर जूली भी पूरी तरह निराश हो गयी और उसने आत्महत्या की पूरी तैयारी कर ली। एक बार फिर उसी फरिश्ते अर्थात् उसकी माँ ने उसे बचा लिया। गिलेरिमिना गरीब अवश्य थी पर एक अच्छी चित्रकार थी। उसने जूली को भी चित्रकारी सिखाने का निश्चय कर लिया। क्या कोई कल्पना भी कर सकता है कि हाथों के बिना भी कोई चित्रकारी कर सकता है। गिलेरिमिना ने जूली को मुँह से ब्रश पकड़ना और उसी प्रकार चित्र बनाना सिखाया। कहते हैं कि ईश्वर किसी से कुछ छीन लेता है तो उसे कुछ विशेष दे भी देता है। जूली को भी कुछ विशेष मिला और वह थी उसकी कल्पना की उड़ान, इमेजिनेशन और क्रिएटिविटी। जूली एक शानदार चित्रकार बन गयी। उसके चित्र जैसे जीवन्त हों। उसके द्वारा बनाए 'डोल्फिन युग्म' के चित्र ऐसे दिखायी पड़ते हैं जैसे अभी-अभी डाल्फिन चित्र से निकल पानी में से छलांग लगा देंगी। कोई स्वप्न में भी नहीं सोच सकता कि ऐसे चित्रों की चितेरी एक हाथों से विहीन लड़की होगी।

जूली को पर्यावरण से अनन्य प्रेम है अतः उसके चित्रों में भी यह स्नेह झलकता है। स्वच्छता के प्रति सन्नद्ध जूली समय मिलते ही बच्चों को लेकर हाथ में झाड़ू लेकर आस-पास की जगह स्वच्छ करने निकल जाती है। वह चित्रकारी का प्रशिक्षण भी देने लगी है। इससे उसे परिवार को आर्थिक संबल देने का मौका मिला है।

अपने को एक मुकाम पर पहुँचाकर इस वीरांगना ने अन्यों को प्रेरित करने का कार्य शुरू कर दिया है। उसका सीधा सा

तर्क है कि समस्त बाधाओं के बाबजूद जब वह कुछ कर सकती है तो अन्य भी कितनी भी विपरीत परिस्थिति क्यों न हों अपने अभीष्ट को प्राप्त करने में एक दिन अवश्य सफल हो जायेंगे। एक मोटीवेशनल स्पीकर के तौर पर जूली की ख्याति बढ़ती जा रही है। इससे उसे आमदनी तो होती ही है, उसने अब तक न जाने कितने जीवन से निराश व्यक्तियों को नए जीवन की दिशा दी है, उनके अन्दर आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें आत्महत्या की त्रासदी से बचाया है। इस बहादुर लड़की तथा उसकी माँ को जितना नमन किया जाय कम है।

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष,श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभाआर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म्प्रकाश अग्रवाल, दनकौर

दूरभाष : ०२६४-२४१७६६४, चलभाष ०६३१४५३५३७६, ६८२६०६३११०

कृपया न्यास की वेबसाईट : www.satyarthprakashnyas.org पर अवश्य देखें

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें। 09314535379

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें।

समाचार

अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मलेन, नेपाल सफलता पूर्वक संपन्न

अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों की शृंखला में नेपाल आर्यसमाज द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली के सहयोग से आयोजित महासम्मेलन २० से २२ अक्टूबर २०१६ तक काठमांडू स्थित तुंडीखेल आर्मी मैदान में अत्यन्त सफलता पूर्वक संपन्न हुआ। भारत से सहस्रों की संख्या में आर्य जनों ने भाग लिया। वहीं अन्य देश यथा मॉरीशस, हालैंड, बर्मा, फिजी, न्यूजीलैंड, अमेरिका आदि से प्रतिनिधियों ने भाग लिया। मॉरीशस से तो १०० प्रतिनिधियों के विशाल समूह ने भाग लिया। सम्मलेन का उद्घाटन नेपाल की राष्ट्रपति महामहिम विद्या भंडारी ने किया तथा महर्षि दयानन्द के योगदान को रेखांकित किया। विशाल संख्या में उपस्थिति का श्रेय सम्पूर्ण कार्यक्रम के संयोजक स्वामी सम्पूर्णानन्द जी को जाता है। सम्पूर्ण कार्यक्रम की अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री सुरेशचन्द्र आर्य ने की। संयोजक श्री माधव प्रसाद उपाध्याय तथा उनकी टीम ने

सम्मलेन को सफल बनाने व व्यवस्थाओं के सफल संचालन के लिए रात-दिन एक कर दिए। इस अवसर पर नेपाल आर्य समाज के लिए भवन निर्माण हेतु आर्य जनों ने दिल खोलकर दान दिया। समारोह में स्वामी धर्मानन्द सरस्वती, आचार्य ज्ञानेश्वर जी के अतिरिक्त भारतीय सांसद स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती तथा डॉ. सत्यपाल सिंह ने भी भाग लिया। सम्मलेन की सफलता हेतु सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली तथा नेपाल आर्य समाज के अधिकारियों को बधाई एवं साधुवाद।

श्री राजकुमार गुप्ता, उदयपुर को उनकी सेवानिवृत्ति के अवसर पर न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

हलचल

टाण्डा आर्यसमाज का शताब्दीत्तर रजत जयन्ती समारोह सफलता के साथ सम्पन्न

आर्यसमाज टाण्डा के प्रधान तथा मिश्रीलाल कन्या इण्टर कॉलेज के प्रबंधक व आर्य नेता श्री आनन्द कुमार आर्य व उनके परिवार के पुरुषार्थ से पूर्णत: व्यवस्थित, सारगर्भित, प्रेरणादायक रहा यह सम्मलेन।

सम्पूर्ण कार्यक्रम के अध्यक्ष स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती तथा स्वागताध्यक्ष श्री बाबू दीनदयाल गुप्त रहे। आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय, डॉ. महावीर मीमांसक, डॉ. सोमदेव शास्त्री, आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक, तपस्वी आर्य सुखदेव, आचार्य हरिप्रसाद, आचार्य हनुमन्त आदि विद्वानों के उपदेश तथा कुलदीप आर्य एवं कैलाश कर्मठ जी के भजनोपदेश अत्यन्त प्रभावशाली रहे। प्रात:कालीन यज्ञ की ब्रह्मा नजीबाबाद कन्या गुरुकुल की आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती थीं। आर्य नेताओं व श्रेष्ठियों में सर्वश्री सुरेश चन्द्र आर्य, स्वामी आर्यवेश जी, प्रो. रासासिंह रावत, राजस्थान के लोकायुक्त मा. सज्जनसिंह कोठारी, विनय आर्य, ठाकुर विक्रमजीत, विद्यामित्र ठकुराल आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

कतिपय विशेषताएँ

मिश्रीलाल कन्या विद्यालय में पढ़ती हैं ३००० छात्राएँ। जिनमें २१०० हैं मुस्लिम छात्राएँ, ऐसा उदाहरण शायद ही कहीं मिलता हो।

अद्भुत नजारा जब मुस्लिम छात्रा सिमरन खान, बाहेस्त जहरा, वारिश खातून ने श्वेता के साथ प्रस्तुत किये वेद मन्त्र।

विद्यालय के अन्दर नहीं पहनतीं बुरका, शोभा यात्रा में भी मिलाये कदम से कदम।

शोभा यात्रा में मुस्लिम भाइयों द्वारा किया गया स्वागत।

स्वामी आर्यवेश ने मुस्लिम मंच पर दिया भाषण।

उपलब्धि - आर्य एकता की बनी संभावना

आर्य नेताओं की घोषणा- आर्य जगत् को अतिशीघ्र शुभ सूचना मिल सकती है कि सार्वदेशिक सभा पर सभी मतभेदों का अवसान होकर एक सभा बनी।

(श्री सुरेशचन्द्र आर्य, श्री विनय आर्य, स्वामी आर्यवेश)

ऋषि निर्वाण दिवस सम्पन्न

आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर में ऋषि निर्वाण एवं नवसस्येष्टि यज्ञ आयोजित हुआ। श्रीमती सरला गुप्ता एवं सुनीता शर्मा द्वारा ऋषि महिमा के भजनोपरान्त प्रो. (डॉ.) अमृतलाल तापड़िया ने महर्षि दयानन्द जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर सत्संग सभा में विस्तार से प्रकाश डालते हुए उनके गुणों को अपने जीवन में उतारने का आह्वान किया। श्री शंकरलाल विद्यावाचस्पति ने दीपावली पर्व के महत्व पर प्रकाश डाला। प्रधान श्री भँवर लाल ने सभी का स्वागत किया और मंत्री श्रीमती ललिता मेहरा ने धन्यवाद किया। कार्यक्रम का सफल संचालन श्री भूपेन्द्र शर्मा ने किया।

- भँवरलाल आर्य, प्रधान

शोक समाचार

आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान्, उदभट् वक्ता, कथाकार, सरल, सौम्य तथा निश्छल व्यक्तित्व के धनी आचार्य अर्जुनदेव वर्णी अब हमारे मध्य नहीं रहे।

हमें व्यक्तिगत रूप से आचार्य जी की स्नेहिल छाया प्राप्त थी। सरल व सारगर्भित वक्तृता उनकी विशेषता थी। उनका निधन आर्य जगत् की अपूरणीय क्षति है।

न्यास तथा सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को श्रद्धावनत् श्रद्धाञ्जलि।

- अशोक आर्य

सत्यार्थ प्रकाश पहेली - १०/१६ के विजेता

सत्यार्थ प्रकाश पहेली के संदर्भ में हमें उत्साहजनक प्रतिक्रियाएँ प्राप्त हो रही हैं। **सत्यार्थ प्रकाश पहेली- १०/१६** के चयनित विजेताओं के नाम इस प्रकार हैं- श्री किशनाराम आर्य; बीलू (राज.), श्री रमेशचन्द्र प्रियदर्शन; सीतामढ़ी (बिहार), श्री किशनाराम आर्य; बीलू (राज.), श्री रमेश आर्य; गुरदासपुर (पंजाब), किरण आर्या; कोटा (राज.), श्री मुकेश पाठक; उदयपुर (राज.), श्रीमती सुनीता भदौरिया; ग्वालियर (म. प्र.), मीना वासुदेव भाई ठककर; डिसा (गुज.), धर्मिष्ठा वासुदेव भाई ठक्कर; डिसा (गुज.), श्री इन्द्रजित् देव; यमुनानगर (हरि.), श्री वासुभाई मगनलाल ठक्कर (कारिया); डिसा (गुज.), श्री धर्मवीर आसेरी; बीकानेर (राज.), श्रीमती परमजीत कौर; नई दिल्ली, श्री पृथ्वी वल्लभदेव सोलंकी; उज्जैन(म. प्र.), श्री सुबोध कुमार गुप्ता; हरिद्वार (उत्तराखण्ड), श्री पुरुषोत्तम लाल मेघवाल; उदयपुर (राज.)। उपर्युक्त सभी सत्यार्थ सौरभ के सुधी पाठकों को हार्दिक बधाई।

ध्यातव्य- पहेली के नए नियम पृष्ठ १३ पर अवश्य पढ़ें।

सुर से सेहत

स्वस्थ हो या बीमार, शरीर संगीत पर प्रतिक्रिया करता है। म्यूजिक थैरेपी का सबसे खूबसूरत हिस्सा ये है कि इसके लिए चिकित्सक के प्रेस्क्रिप्शन की जरूरत भी नहीं। इस थैरेपी के तहत संगीत की स्वरलहरियाँ मरीज के शरीर को कई जटिल बीमारियों में राहत देती हैं। अब चिकित्सक भी इसे 'काम्प्लिमेंटरी थैरेपी' की तरह अपना रहे हैं।

हाल के वर्षों में किसी विशेष चिकित्सकीय मकसद तक पहुँचने के लिए मरीज को संगीत के करीब लाने का चलन बढ़ा है। इसमें संगीत का कोई खास पीस, या फिर कई बार मरीज की पसंद की कोई स्वरलहरी या धुन उसे नियत समय के लिए सुनाई जाती है। विभिन्न शोध भी इसकी पुष्टि कर चुके हैं कि म्यूजिक के पैसिव और एक्टिव फार्म गंभीर शारीरिक-मानसिक समस्याओं में मरीज को काफी राहत देते हैं। यही वजह है कि अब कन्वेंशनल इलाज के साथ म्यूजिक थैरेपी को तरजीह दी जा है। मरीज थैरेपिस्ट के साथ मिलकर अपनी जरूरतों और पसंद के आधार पर संगीत का चयन कर सकता है। हालांकि कई कारणों से शास्त्रीय संगीत को तरजीह दी जाती है। थैरेपी के लिए मरीज का संगीत की पृष्ठभूमि से होना आवश्यक नहीं है।

इन बीमारियों में संगीत करता है मदद

आस्टिस्टिक स्पेक्ट्रम डिसआर्डर, सेरिब्रल पाल्सी, लर्निंग डिफिकल्टी, डाउन-सिंड्रोम, कम्युनिकेशन प्राब्लम, मेंटल हेल्थ प्राब्लम, न्यूरोलाजिकल कंडीशन, सेक्सुअल एब्यूज,

कैंसर और अन्य बड़ी बीमारियाँ, एचआईवी एड्स, एडिक्शन, जेरिआट्रिक केयर, सुनने में समस्या, गर्भवती स्त्री की देखभाल और डिलीवरी के दौरान की जटिलताएँ घटाना आदि। सर्जरी के बाद की रिकवरी में म्यूजिक थैरेपी काफी सहायता करती है।

हर सुर का अलग-अलग असर

संगीत के सारे अंग जैसे ताल, धुन और वाल्यूम शरीर पर अलग-अलग तरह से असर करते हैं। एक मिनट में लगभग ६० से ७० बीट्स की ताल को सबसे ज्यादा आरामदायक माना गया है क्योंकि ये दिल की धड़कन से समानता रखती है। इससे एक पेस तेज होना तनाव का कारक होता है, जबकि धीमा होना सस्पेंस पैदा करता है। इसी तरह से संगीत का वाल्यूम ज्यादा होना भी तनाव बढ़ाता है, जबकि कम वाल्यूम मस्तिष्क को आराम देता है। शरीर की जरूरत के मुताबिक थैरेपी सेशन प्लान किया जाता है, जो हर दिन से लेकर कुछ दिनों के अंतराल पर भी हो सकता है। एक सेशन आधे से एक घंटे तक चलता है। रोगी की दशा और थैरेपी से हो रहे लाभों के मद्देनजर सेशन्स बढ़ाए या घटाए जाते हैं। पैसिव म्यूजिक थैरेपी गर्भवती स्त्री, दिल के मरीज या बिहैवियरल समस्याओं में दी जाती है। वहीं एक्टिव म्यूजिक थैरेपी न्यूरोलाजिकल समस्याओं के अलावा उन बच्चों को दी जाती है, जिन्हें बोलने में समस्या है। इसके अलावा हाइपर-एक्टिव बच्चों में एकाग्रता लाने के लिए इसकी मदद ली जा सकती है।

संगीतमय इलाज

मर्ज के अनुसार इस थैरेपी का पैटर्न, प्रोग्राम और ड्यूरेशन बदलता है। किसी खास भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक या शारीरिक समस्या से जूझ रहा व्यक्ति जब थैरेपिस्ट से सम्पर्क करता है तो जरूरी है कि वो अपने लक्षणों और जरूरतों पर खुलकर बात करे। इसके बाद थैरेपिस्ट प्रभावित व्यक्ति की इमोशनल वेल-बीइंग, शारीरिक स्वास्थ्य, संवाद की क्षमता आदि संगीत पर उसकी प्रतिक्रिया के जरिए जाँचता है। अब इस प्रतिक्रिया (म्यूजिकल रेस्पान्स) के आधार पर खास प्रोग्राम डिजाइन किया जाता है।

इसमें संगीत सुनना, गीत या धुन का विश्लेषण करना, गाना कम्पोज करना, धुन तैयार करना आदि शामिल हो सकते हैं। म्यूजिक थैरेपिस्ट मरीज को जरूरी निर्देश देता है। व्यक्ति संगीत सेशन्स के दौरान अपने दिमाग में उभर

रही छवियों पर बात कर सकता है। अपना पसंदीदा संगीत सुन सकता है। गा या बेसिक वाद्ययंत्र बजा सकता है। हल्का-फुल्का नृत्य कर सकता है। कोई धुन तैयार कर सकता है या फिर बोल-लिख उन पर चर्चा कर सकता है। कुछ सेशन्स समान जरूरतों वाले मरीजों के समूह में तो कुछ व्यक्तिगत भी होते हैं। सामूहिक सेशन के दौरान लोग बैकग्राउंड संगीत के साथ आराम कर सकते हैं तो मिलकर कोई परफार्मेंस भी दे सकते हैं।

संगीत की जानकारी जरूरी नहीं

म्यूजिक थैरेपी मरीज की सामाजिक, भावनात्मक, शैक्षिक और शारीरिक जरूरतों के मद्देनजर संगीत का व्यवस्थित प्रस्तुतीकरण है। संगीत की आवृति मस्तिष्क और फिर शरीर को प्रभावित करती है, जिससे सम्बन्धित जरूरत की भी पूर्ति होती है। जैसे मरीज का चिकित्सक द्वारा दी जा रही दवाइयों के इन्ग्रेडिएंट्स जानना जरूरी नहीं, ठीक वैसे ही म्यूजिक थैरेपी के लिए संगीत की जानकारी जरूरी नहीं। शुद्ध यूनिवर्सल क्लासिकल म्यूजिक, खासकर जिसमें शब्द न हों, कारगर साबित होता है। संगीत स्वस्थ व्यक्तियों के लिए चमत्कारी भी साबित हो चुका है इसलिए बहुत से लोग स्वास्थ्य बरकरार रखने के लिए भी म्यूजिक थैरेपी लेने लगे हैं। तनाव, अवसाद, अनिद्रा, माइग्रेन, डर और दर्द घटाने में इसका उपयोग होता है। यह बच्चों में एकाग्रता और याददाश्त बढ़ाने में मददगार है। गर्भवती महिलाओं को शुरुआत में थैरेपी देना न सिर्फ नार्मल डिलीवरी की संभावना बढ़ाता है, बल्कि भ्रूण के विकास में भी सहायक होता है। आने वाले शिशु में काग्निटिव पहलुओं के अलावा सौंदर्यबोध का भी विकास होता है। कुछ ही थैरेपी सेशन्स के भीतर मरीज खुद में सकारात्मक बदलाव महसूस कर सकता है।

सत्यार्थप्रकाश पहेली- १२/१६

सत्यार्थ सौरभ सदस्य संख्या-

रिक्त स्थान भरिये- सत्यार्थप्रकाश जैसे महान् ग्रन्थ का स्वाध्याय कीजिए। (चतुर्थ समुल्लास पर आधारित) - पुरस्कार प्राप्त करिये

१	ज्ञा	१	■	■	२	र्म २	■	३ ध	३	■
४		मी ४	■	५ दु		५	ग	५	■	■
६ ध	६	ध्व	६	■	■	७ वा	७	■	८ ध	

संकेत (बाएँ से दाएँ) ऊपर से नीचे न भरें।

१. कैसे लोग अधर्म से नहीं डरते?
२. वाणी, बाहु, उदर आदि अंगो के संयम को ऋषि ने क्या कहा है?
३. परलोक में कौन सहायक होता है?
४. जैसे जड़ से काटा वृक्ष नष्ट हो जाता है वैसे ही कौन नष्ट हो जाता है?
५. तप रहित, अनपढ़, प्रतिग्रह-याचक किसमें डूब जाते हैं?
६. जो धर्म न करे और धर्म के नाम से लोगों को ठगे उसे क्या कहा गया है?
७. सब व्यवहार किससे सिद्ध होते हैं?
८. परमदर्शनीय परमात्मा को कौन शीघ्र प्राप्त कराता है

सत्यार्थ प्रकाश पहेली- १०/१६ का सही उत्तर

①श्राद्ध ② तर्पण ③ मध्याह्न ④देव ⑤ब्रह्मा ⑥ देवयज्ञ ⑦अग्निष्वात्त ⑧पितृयज्ञ

''विस्तृत नियम पृष्ठ १३ पर पढ़ें एवं ₹५१०० पुरस्कार प्राप्त करें।''

कार्यालय में हल की हुई पहेली प्राप्त करने की अन्तिम तिथि- १५ जनवरी २०१७

परिश्रम का फल

कथा सरित

मनुष्य परिश्रम के बल पर जीवन को सफल बना सकता है। जीवन में सफलता के लिए साधनों का अभाव परिश्रमी को नहीं खलता। दृढ़ संकल्पी और परिश्रमी का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। जहाँ चाह है वहाँ राह है। संकल्प, साहस और श्रम के बल पर साधारण व्यक्ति राष्ट्र के महान् पद को प्राप्त कर सकता है। ऐसा ही एक प्रेरक उदाहरण अमरीका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का यहाँ प्रस्तुत है।

एक पतला दुबला बालक लकड़ियाँ काट रहा था। परिश्रम के कारण उसका शरीर पसीने से तर था फिर भी वह आराम की बात न सोचकर तल्लीनता से अपने काम में जुटा हुआ था। घर की झाड़ू लगाना, पानी ढोकर लाना, खाना बनाना सब काम उसी को करना था। इस प्रकार काम करते दिन ढल गया रात्रि आने को थी। इतना परिश्रम करने के बाद थकना भी स्वाभाविक था। नींद भी आनी थी किन्तु वह सोया नहीं दीपक जलाकर पढ़ने बैठ गया। जीवन में सफलता की इच्छा रखने वाले व्यक्ति आराम नहीं श्रम से, आलस्य नहीं उद्योग से प्रेम करते हैं। ऐसा लगता था कि उस व्यक्ति ने भी यह निश्चय कर लिया था कि उसे जीवन में महान् बनना है।

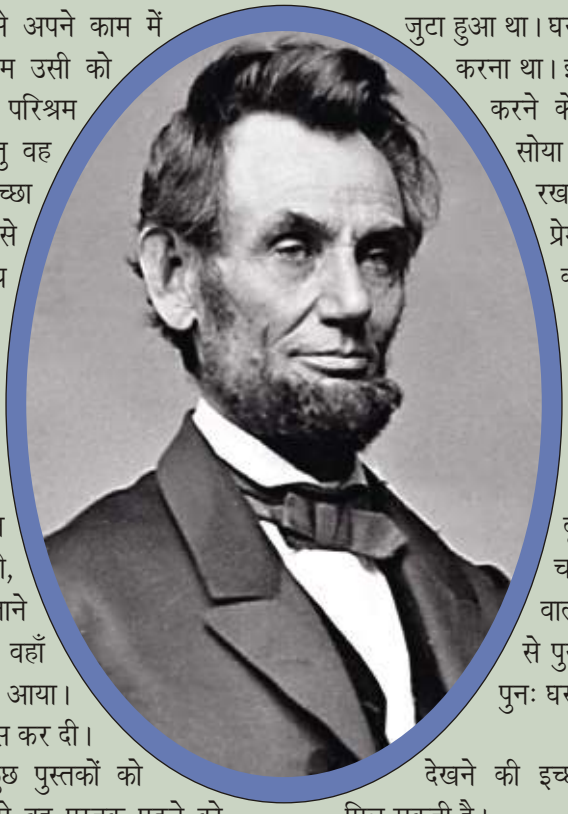

वह प्रत्येक बड़े लेखक की पुस्तक को पढ़ना चाहता था। उनके आदर्शों को अपनाने की इच्छा रहती थी। उसे गुण संचय की धुन सी लगी रहती थी। एक दिन ब्लैक स्टोन की एक पुस्तक पढ़ने की इच्छा हुई। पुस्तक खरीदने की सामर्थ्य नहीं थी। घर से ४ मील दूर एक सार्वजनिक पुस्तकालय से वह पुस्तक मिल सकती थी, चार मील पैदल कौन जाये? परन्तु वह थक कर बैठ जाने वालों में से नहीं था। वह तुरन्त चल पड़ा, पुस्तकालय पहुँचा। वहाँ से पुस्तक लेकर फिर ४ मील पैदल लौटा। रास्ते में पुस्तक पढ़ते आया। पुनः घर पर पढ़ी और फिर चार मील पैदल जाकर के ही पुस्तक वापस कर दी।

एक दिन उसे कानून की कुछ पुस्तकों को देखने की इच्छा हुई। पता लगा कि एक अवकाश प्राप्त जज के यहाँ से वह पुस्तक पढ़ने को मिल सकती है।

जज के गाँव का पता लगाकर वह चल दिया। उस गाँव में जाने के लिए रास्ते में बर्फ की नदी पड़ती थी। उसे पार करके वह गाँव में पहुँच गया। गाँव पहुँचकर जज का घर खोजा और उनके पास जाकर अपनी इच्छा प्रकट की। जज ने कहा पुस्तकें तो उनके पास हैं किन्तु उनका नौकर इस समय छुट्टी पर चला गया है। यदि तुम उसका काम सँभाल लो तो वे पुस्तकें देखने को मिल सकती हैं। चाह के धनी को क्या चाहिये, नौकर का काम सँभाल लिया। दिन में वह काम करता और रात को जज से माँगकर पुस्तकें देखता। इस प्रकार एक सप्ताह तक मेहनत के बल पर उसकी जिज्ञासा पूर्ण हुई। जब लौटा तो जज उसकी मेहनत लगन से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने कुछ पुस्तकें उसे उपहार में दे दीं।

सतत् कार्यरत रहने वाला वह व्यक्ति एक दिन संसार के सबसे धनी एवं बड़े राष्ट्र अमरीका का राष्ट्रपति बना।

साभार- हितोपदेशक

राजा-प्रजा सम्बन्ध

मोहाद्राजा स्वराष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया।
सोऽचिराद् भ्रश्यते राज्याज्जीविताच्च सबान्धवः।।
शरीरकर्षणात्प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनां यथा।
तथा राज्ञामपि प्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्रकर्षणात्।। - मनु. ७/१११-११२

भावार्थ- राजा सावधान रहे कि यदि प्रजा क्षीण या निर्बल होगी तो राजा बहुत दिनों तक शासन नहीं कर सकेगा-प्रजा के हित में ही राजा का हित निहित है।

यदि स्वयं राजा के द्वारा, या राजपुरुषों द्वारा प्रजा का शोषण किया जावेगा या वह डाकू-लुटेरों से प्रजा की रक्षा करने में असमर्थ होगा तो उसका राज्य स्थिर नहीं रह सकेगा।

अग्नि पुराण में कहा गया है-

राष्ट्रपीड़ाकरो राजा करके वसति चिरम्।
अरक्षिताः प्रजा यस्य नरकं तस्य मन्दिरम्।।

अर्थात् राष्ट्र को पीड़ित करने वाला राजा चिरकाल के लिए नरक में सड़ता है तथा जो पीड़ा नहीं देता है परन्तु प्रजा की रक्षा भी नहीं करता है ऐसे राजा के लिए भी नरक में मंदिर बना रहता है। शुक्राचार्य जी कहते है- **अन्यथा स्वप्रजातापो नृपं दहति सान्वयम्।** (२-२५) अर्थात् प्रजा से जो संताप की अग्नि उठती है वह राजा तथा उसके सारे वंश को दग्ध करके ही शान्त होती है। इसीलिए उनका कथन है-

न कर्षयेत् प्रजां कार्यमिषतश्चनृपः सदा।
अपि स्थाणुवदासीत शुष्यन्परिगतः क्षुधा।। (२-२२८, २२९)

'अर्थात् चाहे राजा भूख के मारे सूखकर काठ हो जाए पर अपने लिए प्रजा को कभी न सताए।' वेद में इस प्रकार के बहुत से मंत्र हैं जिनमें राजा को प्रजा के प्रति विनम्र दयालु रहने की बात कही गई है। राजा यदि अपनी प्रजा के साथ इस प्रकार का व्यवहार करेगा तभी प्रजा भी उसे सब प्रकार का सहयोग देगी अन्यथा प्रजा बगावत करके उसके राज्य को समाप्त कर सकती है। एक आदर्श राज्य उसे ही कहा जा सकता है जहाँ राजा और प्रजा में पूर्ण सामंजस्य हो तथा ऐसे राज्य में ही जनता की चतुर्दिक उन्नति संभव है।

स्वामी दयानन्द ने मुरादाबाद में राजा-प्रजा के प्रेम संबंध पर जो व्याख्यान दिया उसे सुनकर मिस्टर स्पीडिंग संयुक्त जिलाधीश ने कहा था- Sepoy Mutiny would not have taken place had both the rulers and the ruled behaved in the like manner as expressed by Swamiji. [Life of Maharshi Dayanand; D.N. mukhopadhyay; Ch.24,P.54]

राज्य तथा व्यक्तिः- राज्य तथा व्यक्ति का क्या संबंध हो इस पर विश्व के विद्वानों ने अनेक विचार (वाद) प्रस्तुत किये हैं- जैसे पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि आदि। कहीं पर राज्य को अत्यन्त अल्प कर्त्तव्य कर्म प्रदान किये गये हैं, व्यक्ति के ऊपर राज्य का नियंत्रण न्यून है तथा प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्ति स्वतंत्र है। दूसरी तरफ राज्य का अत्यधिक नियंत्रण स्थापित किया गया है जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता नाम की कोई चीज ही नहीं रहती। महर्षि मध्यमार्गी हैं। प्रजा की आन्तरिक व बाह्य आक्रमणों से सुरक्षा, ऐश्वर्यों में वृद्धि का प्रयास तथा ऐश्वर्य से प्रजा का रंजन करते रहने की राज्य से अपेक्षाएँ हैं। शैक्षिक, सांस्कृतिक व धार्मिक (यहाँ इसका अर्थ पूजा-पद्धति आदि बाह्य स्वरूप से है) कार्यों में सामान्यतः धर्मार्य तथा विद्यार्य सभा की राय के बिना राज्य का कोई दखल नहीं होगा। इस पर प्रो.बी.बी. मजुमदार कहते हैं-

Swami Dayanand says that the political assembly should not make any law which affects the culture and religion of the community without the consent of the Vidya Sabha and the Dharma Sabha.

वस्तुतः वैदिक दर्शन में राज्य तथा प्रजा के कर्त्तव्यों पर अधिक ध्यान दिया गया है। राज्य की समग्र उन्नति जिसमें व्यक्ति तथा समाज की उन्नति भी शामिल है, दोनों के सामन्जस्य पर निर्भर है। इस हेतु जिस सिद्धान्त का निर्वचन स्वामी दयानन्द ने किया है, उसे पं. रघुनन्दन शर्मा (वैदिक सम्पत्ति के यशस्वी लेखक) ने त्यागवाद का नाम दिया है। समष्टिगत हितों के लिए व्यक्ति अपने हितों को स्वेच्छा से त्याग करता है पर इसका यह अर्थ नहीं कि उसका अपना व्यक्तित्व समाप्त हो जाय। महर्षि लिखते हैं-

तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के अधीन सब लोग वर्तें, सबके हितकारक कामों में सम्मति करें। सर्वहित करने के लिए परतंत्र और धर्मयुक्त कामों में अर्थात् जो-जो निज के काम हैं उन उनमें स्वतंत्र रहें। (सत्यार्थ प्रकाश ६ समुल्लास)

सम्पादक- अशोक आर्य

HOT HAI BOSS
Dollar
ULTRA™
THERMALS

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 December-2016 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2016-2018

महर्षि दयानन्द सरस्वती

जो धर्मयुक्त उत्तम काम करे, सदा परोपकार में प्रवृत्त हो, कोई दुर्गुण जिसमें न हो, विद्वान्, सत्योपदेश से सबका उपकार करे, उसको साधु कहते हैं।

सत्यार्थप्रकाश पृ. ३५३

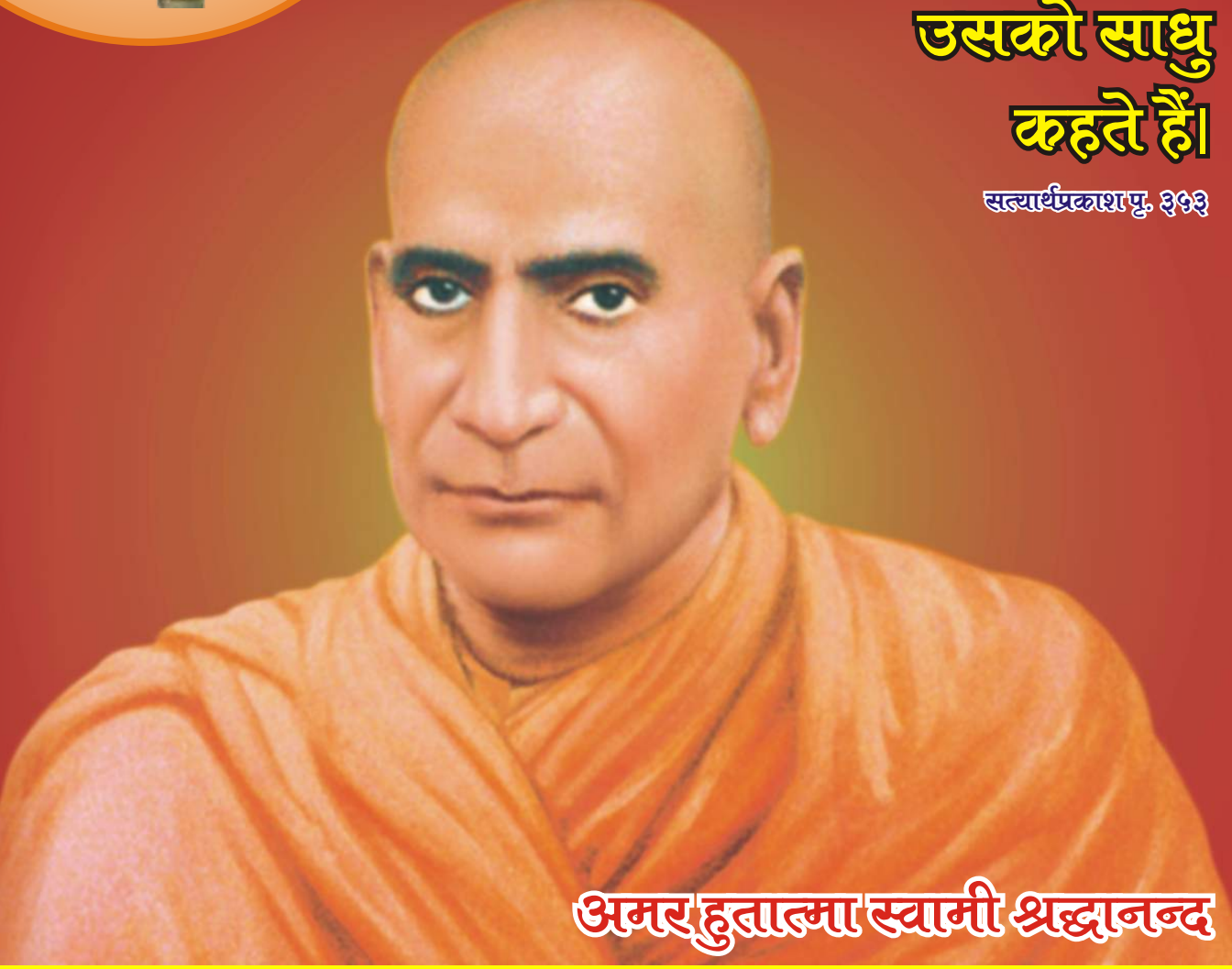

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य
मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख | प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख | प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर